www.thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 8 सितम्बर 2013 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 8 सितम्बर, 2013 से 14 सितम्बर 2013

भा. शु.–03 ● वि० सं०–2070 ● वर्ष 78, अंक 72, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,114 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. श्रेष्ठ विहार में हुई डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन राष्ट्रीय अंतर्विद्यालय वादविवाद प्रतियोगिता

डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी ने डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् राष्ट्रीय अंतरविद्यालय वाद–विवाद प्रतियोगिता–2013 का आयोजन किया।

वादविवाद विषय था–

'भारत की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था विकासशील देश की आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ है।'

यह प्रतियोगिता डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, श्रेष्ठ विहार, दिल्ली के परिसर में सम्पन्न हुई। सुप्रसिद्ध नृत्यांगना पद्मश्री शोवना नारायण ने इस प्रतियोगिता का उद्घाटन किया। अपने भाषण में श्रीमती नारायण ने कहा कि ऐसी प्रतियोगिताओं का आयोजन बच्चों के व्यक्तित्व के स्वस्थ विकास के लिए आवश्यक है।

डी.ए.वी.सी.एम.सी. के सचिव श्री कर्ण खन्ना ने यह प्रतियोगिता प्रायोजित की और बच्चों को शुभकामना देते हुए कहा कि ऐसी प्रतियोगिताओं में उनकी भागीदारी उनके भीतर संघर्ष की भावना का विकास करती हैं। डी.ए.वी. कालेज मैनेजिंग कमेटी की निदेशक डॉ. निशा पेशिन ने इस अवसर पर अपने सम्बोधन में कहा कि वाद–विवाद प्रतियोगिताएँ बच्चों में विश्लेषण क्षमता, अपनी बात प्रभावशाली ढंग से कहने के कौशल एवं आत्म विश्वास का विकास करती हैं।

प्रतियोगिता हिंदी और अंग्रेजी में आयोजित की गई। अंग्रेजी में 51 तथा हिंदी में 48 टीमों ने भाग लिया। इन में डी.ए.वी. के अलावा अन्य स्कूलों की टीमें भी शामिल थीं। प्रथम, द्वितीय, तृतीय और सांत्वना पुरस्कार के रूप में क्रमशः 31,000/–रू., 21,000/–रू., 15,000/–रू., एवं 11,000/–रू. का राशि प्रदान की गई। सर्वश्रेष्ठ प्रश्नकर्त्ता को पुरस्कार के रूप में 10,000/–रू., दिए गए।

हिंदी में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल श्रेष्ठ विहार, दिल्ली को सर्वश्रेष्ठ टीम घोषित किया गया। श्रेष्ठ वक्ता के पुरस्कारों में प्रथम पुरस्कार डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल की पंखुड़ी गुप्ता, को मिला। डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल के रोहन रूस्तगी को सर्वश्रेष्ठ प्रश्नकर्त्ता घोषित किया गया।

डी.ए.वी. कालेज मैनेजिंग कमेटी के उप प्रधान, स्कूल की मैनेजिंग कमेटी के अध्यक्ष सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् श्री टी. आर.गुप्ता ने सफल प्रतियोगियों को पुरस्कार प्रदान किए। उन्होंने कहा कि बच्चों के विचार तथा उनकी प्रस्तुति को सुन कर मुझे विश्वास हो गया कि हम देश के उज्ज्वल भविष्य का सृजन कर रहे हैं।

अपने दायित्व को निःस्वार्थ भाव से निभा रहा है डी.ए.वी. बल्लभगढ़

पिछड़े वर्ग की लडकियों के उत्थान में अपने उत्तरदायित्व एवं सहभागिता की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल बल्लभगढ में श्री पूनम सूरी जी, प्रधान डी.ए.वी. प्रबंधकर्तृ समिति, द्वारा इस वर्ष भी पुस्तकें, कॉपियाँ, वर्दी,स्कूल बैग एवं अन्य स्टेशनरी वितरित की गई। श्री पूनम सूरी जी ने विद्यालय की इस परंपरा को बनाए रखने के लिए प्रधानाचार्य श्री वी.के.चोपड़ा की प्रशंसा की।

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, बल्लभगढ़ में पिछले कई वर्षों से कोशिश संस्था के माध्यम से आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग की लड़कियों को निःशुल्क शिक्षा एवं शिक्षण सामग्री उपलब्ध कराई जाती है।

इस संस्था के माध्यमसे पिछड़े वर्ग की लड़कियों को न केवल निःशुल्क शिक्षा दी जाती है बल्कि विद्यालय के अन्य छात्रों के समान शैक्षणिक सुविधाएँ और उन्नति के अवसर भी प्रदान किये जाते हैं।

विद्यालय इन छात्राओं को बेरोजगारी और गरीबी जैसी समसामयिक चुनौतियों का सामना करने के योग्य बनाने में अपने दायित्व को निस्वार्थ भाव से निभा रहा है।

डी.ए.वी. हरिपुरा की छात्राओं ने सैनिक भाइयों को बांधी राखी

एस.जी.जे. डी.ए.वी. सीनियर सैकेण्डरी पब्लिक स्कूल, हरिपुरा की 9वीं एवं 11वीं कक्षा की छात्राओं ने रक्षाबन्धन के पावन अवसर पर हिन्दुमलकोट स्थित भारत पाक सीमा पर तैनात बी.एस.एफ के सैनिक भाइयों को राखी बांधी। इस पावन अवसर पर छात्राओं ने सैनिक भाइयों के मनोरंजन के लिए विभिन्न सांस्कृतिक प्रस्तुतियां भी दीं। बी. एस. एफ कमाण्डर ने सभी बच्चों एवं स्टॉफ मेम्बर्स को रक्षा बन्धन की बधाई दी और बच्चों को सीमा पर आकर राखी बांधने के लिए धन्यवाद दिया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

www.thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 8 सितम्बर, 2013 से 14 सितम्बर, 2013

प्रभु! मेरी हालत पर तरस खाओ

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

सं मा तपन्त्यभितः, सपत्नीरिव पर्शवः।
निबाधते अमतिर्नग्नता जसुः, वेर्न वेवीयते मतिः।।

ऋग् १०.३३.२

ऋषिः **कवषः ऐलूषः**। देवता **इन्द्रः**। छन्दः **बृहती।**

● (**पर्शवः**) पार्श्व अस्थियाँ, पसलियाँ, (**सपत्नीः इव**) एक पति की अनेक पत्नियों के समान, (**अभितः**) दोनों ओर से, (**मा**) मुझे, (**सं तपन्ति**) संतप्त कर रही हैं।, (**अमतिः**) मतिहीनता, (**नग्नता**) नग्नता [और], (**जसुः**) दुर्बलता, मृत्यु, (**निबाधते**) पीड़ित कर रही हैं।, (**वेः न**) पक्षी [की मति] के समान, (**मतिः**) [मेरी] मति, (**वेनीयते**) अतिशय कांप रही रही है।

● हे भगवन्! देखो तो, मैं क्या-से-क्या हो गया! तुमने राजा बनाकर मुझे इस देह-रूप अयोध्यापुरी में भेजा था। पर राजा होना तो दूर रहा, मै तो दीन-हीन -दरिद्र होकर निवास कर रहा हूँ। एक समय ऐसा अवश्य था, जब मैं उन्नति के शिखर पर आसीन था। जहाँ कहीं मैं निकल जाता था, वहाँ मेरा स्वागत होता था, सब दुर्जन मुझसे थर-थर कांपते थे और सब सृजन मुझे अपने मध्य पाकर प्रफुल्ल हो जाते थे। पर आज तो मेरी अपनी पार्श्व-अस्थियाँ ही मुझे चुभ रही हैं, जैसे एक पति की अनेक पत्नियाँ उसे सन्तप्त करती हैं। मुझे मतिहीनता ने घेर लिया है, अविचारशीलता ने अपने पंजे में कस लिया है। जहाँ मैं किसी समय मतिमानों में अग्रणी माना जाता था, वहाँ अब अविवेक और किंकर्तव्यविमूढ़ता से ग्रस्त हूँ। नग्नता भी अपने पैर फैला रही है। जहाँ मैं भौतिक सम्पत्ति से नग्न हो गया हूँ, वहाँ साथ ही मेरी आध्यात्मिक सम्पत्ति भी लूट गई है। शारीरिक और मानसिक दुर्बलता भी पीड़ित कर रही है। शरीर से चला नहीं जाता, गिर-गिर पड़ता हूँ। मन मर गया है, उत्साह समाप्त हो गया है, इच्छा-शक्तियाँ और महत्त्वाकांक्षाएँ किनारा कर गई हैं।

जैसे सामने बहेलिये को देखकर पक्षी की मति कांपने लगती है, वैसे ही अपने ही सम्मुख मृत्यु को नाचता देखकर मेरी मति भी कांप रही है। शारीरिक मौत और आध्यात्मिक मौत का नग्न ताण्डव मेरे आगे हो रहा है। मैं उससे त्राण पाने के लिए आकुल हो रहा हूँ, पंख फड़फड़ा रहा हूँ, बेचैनी से करवटें बदल रहा हूँ। हे प्रभु! इस दुरवस्था से, इस भीषण परिस्थिति से, मेरा उद्धार कर दो। तुम्हारे अतिरिक्त इस समय कोई साथी दृष्टिगत नहीं हो रहा। तुम्हीं रक्षक हो, तुम्हीं खिवैया हो, तुम्हीं मंझधार से पार करानेवाले हो। हे प्रभु! मेरी हालत पर तरस खाओ, मुझे अपनी शरण में ले लो।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

घोर घने जंगल में

● महात्मा आनन्द स्वामी

अध्यात्मवाद और मायावाद को सन्तुलित रूप में अपना कर चलने की बात स्वामी जी कर रहे थे। बात को आगे बढ़ाते हुए कि यह दोनों वाद संसार में ही नहीं हमारे शरीर में भी विचार शक्ति (Sensary Nerves) और कर्म शक्ति (Motor Nerves) के रूप में विद्यमान हैं। यही गीता की भाषा में कृष्ण शक्ति और अर्जुन शक्ति है जहाँ योगेश्वर कृष्ण और धनुर्धारी अर्जुन अर्थात् ब्रह्म शक्ति और क्षात्रशक्ति के मिलकर चलने से निश्चित विजय की बात कही गयी। बुद्धिबल और बाहुबल उचित रूप में मिलें तो शरीर और इसका जीवन ठीक रूप से चलता है।

स्वामी जी ने कहा ऋषियों द्वारा घोर तप करने के बाद ज्ञान की ऐसी सम्पत्ति प्राप्त की गई जिसके सामने संसार का बड़े से बड़ा कोश भी तुच्छ है। लेकिन हमने इस ज्ञान-सम्पदा की ओर देखा ही नहीं। फिर ऋषि दयानन्द आए उन्होंने ज्ञान की इन गठड़ियों को खोल कर 'सत्यार्थप्रकाश' और 'ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका' जैसे दो अमूल्य ग्रन्थों में इस ज्ञान को समेट कर रख दिया।

इसके बाद अगले ब्राह्मण की बात करते हुए स्वामी जी बताया कि अब तक जो बाते बताई गईं वे केवल मनुष्य के लिए ही हैं। लेकिन साथ ही यह भी बताया कि वेद का सबसे बड़ा सन्देश है 'मनुर्भवः' अर्थात् मनुष्य बनो। यह कठिन भी नहीं केवल ठीक विधि से प्रस्तुत करने की आवश्यकता है। उपनिषद् ने भी कहा– 'ये सब बातें, ईश्वर के प्राप्त करने की विधि मैं तुम्हारे लिये कहता हूँ– तुम, जो मनुष्य हो।

अब आगे.....

परन्तु आज हम सब-कुछ बनना चाहते हैं केवल मनुष्य नहीं बनना चाहते। दूसरी बातों को छोड़िये। केवल खाने-पीने को ही लीजिये। तैत्तिरीयोपनिषद् में एक कथा आती है। प्रजापति ने सृष्टि बनाई तो कुछ नियम भी बनाए। सबको कहा, इन नियमों के अनुसार चलना होगा।

पशुओं को दूसरे नियम तो समझ में नहीं आये। उन्हें भूख लग रही थी। उन्होंने प्रजापति के पास जाकर कहा, "महाराज! हम खायें क्या और दिन में कितनी बार?"

प्रजापति बोले, "तुम्हारे लिए खाने-पीने का कोई नियम नहीं, जब चाहो खा सकते हो। तुम्हारे लिए दिन और रात, प्रातः और सायं का प्रतिबन्ध नहीं। तुम्हारी इच्छा हो तो 24 घण्टे खा सकते हो।"

मनुष्य भी पास ही खड़े थे। वे भी आगे बढ़े। हाथ जोड़कर कहा, "महाराज! पशुओं के लिए अपने बहुत अच्छी आज्ञा दी, परन्तु भूख तो हमें भी लगी है। हमारे लिए क्या नियम है?"

प्रजापति बोले, "तुम मनुष्य हो। तुम्हारे लिए यह नियम है कि तुम दिन-रात में केवल दो बार खाओ।"

मनुष्यों ने सोचा, ये अच्छे प्रजापति हैं! पशुओं को चौबीसों घंटे खाने की आज्ञा दे दी। हमें केवल दो बार खाने को कहते हैं। हमसे तो पशु ही अच्छे हैं।

ऐसा सोचकर वे चले आये। तभी से मनुष्य में बार-बार वह पशुपन जाग उठता है, आजकल भी जाग रहा है। प्रातः से सायं तक हमें खाने से ही अवकाश नहीं मिलता। हमारे पूर्वज प्रातः सन्ध्या-हवन करने के पश्चात् खाना खाते, दिन-भर काम करते, सायंकाल फिर खाते और रात को सो जाते थे। अंग्रेज़ इस देश में आये तो उन्होंने दो समय के खाने को चार समय बना दिया– प्रातः नाश्ता, दोपहर को लंच, शाम को चाय, रात को डिनर। हमने इन चार समय के खाने को शायद 16 समय का खाना बना दिया है। बाबू जी प्रातः सोकर उठते हैं। सोये-सोये इन्हें थकावट हो गई है। इस थकावट को दूर करने के लिए चाय चाहिए। फिर इन्हें स्नान के लिए जाना है उसके लिए अलग चाहिए। तब इन्हें दफ्तर जाना है उसके लिए नाश्ता चाहिए। दफ्तर पहुँचकर काम करना है, इसके लिए फिर चाय चाहिए। काम चल रहा है, अतः बार-बार चाय चाहिए। दोपहर के समय खाना चाहिए। शाम को समय चाय चाहिए। घर आये तो कुछ नाश्ता चाहिए। किसी को मिलने गये तो चाय चाहिए। रात को खाना चाहिए। सोने से पूर्व कॉफ़ी चाहिए। हे मेरे भगवान्! कोई हद है इस खाने की?

रेलगाड़ी पर चढ़िये, किसी समय भी किसी स्टेशन पर पहुँचिये। बाहर से आवाज़ आयेगी, 'ताज़ा पूरी! ताज़ा कचौरी!' प्रातः प्रभु-भजन का समय है, परन्तु आवाज़

आती है, 'ताज़ा समोसा गाज़ियाबाद का!' खाने का सचमुच कोई समय नहीं रहा। प्रत्येक समय खाने का समय बन गया है। शैख़ सादी ने कहा था–

तनूरे–शकम दम–ब–दम ताखतन।

अब एक–एक दम में कई–कई बार 'ताखतन' हो गया है। इस प्रकार खाने वाला व्यक्ति यदि कहे Man is an animal तो बिल्कुल ठीक है परन्तु यदि वह कहे कि Man is a human being तो बिल्कुल अशुद्ध है, क्योंकि मनुष्यता उसमें रही नहीं।

एक बार एक भाई ने मुझे बताया कि पाकिस्तान के गर्वनर–जनरल ख्वाजा नाजिमुद्दीन प्रातः बकरे के आठ पाव मांस का नाश्ता करते हैं, अण्डे और फल अलग खाते हैं, दोपहर के समय 12 मुर्गियाँ खा जाते हैं, रोटियाँ और कबाब और पुलाव अलग। सायं कोई दो सेर भुना हुआ मांस खाते हैं और कम–से–कम एक टोकरा फल। रात्रि के समय उनका मेज़ कोई 35 प्रकार के खानों में भरा रहता है और गवर्नर–जनरल महोदय सब–कुछ चट कर जाते हैं।

मैंने हँसते हुए कहा, "जो व्यक्ति इतना खाता है वह एक दिन पाकिस्तान को भी बेच खायेगा।" अन्त में वही हुआ। गवर्नर–जनरल ने पाकिस्तान को अमेरिका के पास बेच दिया।

मैं यह नहीं कहता कि आप लोग खाना बन्द कर दीजिये और व्रत रखकर बैठ जाइये। परन्तु, हर समय खाना और बहुत अधिक खाना मानवता तो है नहीं। मनुष्य को वास्तव में बहुत अधिक खाने की आवश्यकता नहीं होती। उसे खराब करती है चटोरी जीभ। यह कहती है और ला, और ला, यह ला, वह ला। इसकी तृप्ति कभी होती नहीं।

एक थे सेठ जी। खाँसी लग गई उन्हें, परन्तु उन्हें आदत थी खट्टा दही, खट्टी लस्सी, खट्टा अचार और इसी प्रकार की दूसरी वस्तुएँ खाने की। जिस वैद्य जी के पास जाते, वह कहता– ये वस्तुएँ खाना छोड़ दो, उसके पश्चात् चिकित्सा हो सकती है। अन्त में एक वैद्य जी मिले। उन्होंने कहा, "मैं चिकित्सा करता हूँ, आप जो चाहें खाते रहिये।" वैद्य जी ने औषधि दी। ये सेठ जी खट्टी वस्तुएँ खाते रहे। कुछ दिन के पश्चात् मिले तो वैद्य जी से बोले, "वैद्य जी! खाँसी बढ़ी तो नहीं परन्तु कम भी नहीं हुई।"

वैद्य जी ने कहा, "आप मेरी दवाई खाते रहिये, खट्टी चीजें भी खाते रहिये, इससे तीन लाभ होंगे।" सेठ जी ने पूछा, "कौन–कौन से?" वैद्य जी बोले, "पहला यह कि घर में चोरी कभी नहीं होगी, दूसरा यह कि कुत्ता कभी नहीं काटेगा, तीसरा यह कि बुढ़ापा कभी नहीं आयेगा।"

सेठ जी ने कहा, "ये तो वस्तु लाभ की बातें हैं परन्तु खाँसी में खट्टी वस्तुएँ खाने से यह सब–कुछ होगा कैसे?" वैद्य जी बोले, "खाँसी हो या खट्टी वस्तुएँ खाते रहिये तो खाँसी कभी अच्छी होगी नहीं। दिन में खाँसोगे, रात में भी, तब चोर कैसे आयेगा? और खाँस–खाँसकर हो जाओगे दुर्बल। लाठी के बिना उठा नहीं जायेगा, चला नहीं जायेगा, हर समय लाठी हाथ में रहेगी तो कुत्ता कैसे काटेगा? और दुर्बलता के कारण मर जाओगे यौवन में ही, तब बुढ़ापा आयेगा कैसे?"

सेठ जी को तब समझ आई। परन्तु प्रायः हमें समझ नहीं आती। इस चटोरी जिह्वा के लिए पता नहीं हम क्या–क्या करते हैं, किस प्रकार अपना नाश करते हैं। सबसे बढ़कर अपनी मानवता खो बैठते हैं।

मेरा यह तात्पर्य नहीं कि आप लोग खाना–पीना बन्द करके लगातार व्रत रखना आरम्भ कर दें। वैसे कभी–कभी व्रत रख लो तो अच्छा है। इससे स्वास्थ्य ठीक रहता है, मन भी ठीक रहता है और सबसे बड़ी बात यह है कि सब लोग यदि सप्ताह में एक दिन का व्रत रखें तो देश की अन्न–समस्या सुलझ सकती है। हमारे देश में इस समय कुल अन्न होता है लगभग 9 करोड़ टन। हमारी आवश्यकता है दस करोड़ टन। एक करोड़ टन अनाज हम बाहर से मँगाते हैं। वर्ष में दस करोड़ टन की आवश्यकता हो तो इसका अर्थ है कि हम एक मास में 58 लाख टन अन्न खाते हैं। प्रतिदिन लगभग दो लाख चौरासी सहस्र टन अन्न की हमें आवश्यकता पड़ती है। यदि प्रत्येक व्यक्ति सप्ताह में एक व्रत रखे और वर्ष में बावन तो हिसाब लगाकर देखिये, देश में अन्न की जितनी खपत आज होती है उसमें एक करोड़ सैंतालीस लाख अड़सठ सहस्र टन की कमी हो जायेगी। इस समय हमें आवश्यकता केवल एक करोड़ टन की है जो हम बाहर से मँगवाते हैं। फिर बाहर से अन्न मँगवाये बिना भी हमारे पास साढ़े सैंतालीस लाख टन अन्न प्रतिवर्ष बच जायेगा। पुण्य अलग मिलेगा, फल अलग। इसलिए मैं कहता हूँ कि यदि सब लोग सप्ताह में एक–एक व्रत रखने लगें तो अन्न की समस्या सुलझ जायेगी।

परन्तु सुनो! व्रत का अर्थ केवल व्रत है। वैसे नहीं जैसे आजकल व्रत रखे जाते हैं। एक दिन मैं आपके इसी दिल्ली नगर में चाँदनी चौक में जा रहा था तो देखा कि हलवाइयों और फलवालों की दुकानों पर मिठाइयों और फलों के ऊँचे–ऊँचे ढेर लगे हुए हैं। इतनी भीड़ कि मनुष्य पर मनुष्य चढ़ा जाता है। प्रत्येक व्यक्ति मिठाई और फलों के टोकरे खरीद रहा है।

मैंने अपने पास चलते व्यक्ति से पूछा, "आज क्या बात है भाई मेरे?"

उसने कहा, "कल करवा चौथ का व्रत है न! स्त्रियाँ व्रत रखती हैं। उसके लिए ये सब–के–सब लोग मिठाइयाँ और फल खरीद रहे हैं।"

मैंने मन–ही–मन सोचा – यदि ऐसे व्रत प्रति सप्ताह आरम्भ हो जायें तो देश का दिवाला निकल जाये। आज एक करोड़ टन अन्न बाहर से मँगवाना पड़ता है, फिर शायद दस करोड़ टन मँगवाना पड़े। अच्छा है, ऐसे व्रत प्रति सप्ताह नहीं होते।

सो भाई मेरे! ऐसे व्रत की बात मैं नहीं कहता; और व्रत हो या न हो, इस प्रकार खाना तो ठीक नहीं। खाने का सीधा–सा तात्पर्य यह है कि उचित ढंग से, उचित वस्तु खाओ।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

'उचित खाना, उचित व्यवहार करना, उचित कर्म करना, उचित सोना और जागना– ऐसा योग– ऐसा मार्ग ही दुःखों को दूर करने वाला है।"

हमारे पूर्वजों ने कहा, "चार रोटी की भूख हो तो दो रोटी खाओ, एक रोटी के स्थान पर पानी पिओ, एक रोटी का स्थान वायु के लिए रहने दो।" परन्तु यह पूर्वजों की विधि थी। हमारी विधि यह है कि चार रोटियों का स्थान हो तो पांच खाओ और उसे पचाने के लिए लवणभास्कर, हिंग्वाष्टक चूर्ण, शंखवटी और यह वटी और वह वटी खाते रहो।

अरे भाई! इतने कष्ट में जो पड़ता है तो अच्छा यह है कि भोजन ही मर्यादा से खा। क्यों अन्धाधुन्ध खाये जाता है? क्यों अपने लिए कष्ट उत्पन्न करता है?

कभी–कभी मैं सोचता हूँ कि यदि ये विवाह न हों, बारातें न हों, दावतें और पार्टियाँ न हों तो पेट के बीमारों की संख्या में कितनी कमी हो जाय! आजकल विवाहों का समय है न! कभी डाक्टरों, हकीमों, वैद्यों के पास जाकर देखो वहाँ कैसी भीड़ लग रही है। पेट के कितने रोगी हैं और उनमें कितने रोगी किसी दावत में अन्धाधुन्ध खाने के कारण बीमार हुए हैं।

परन्तु इन लोगों का अपराध नहीं। ये तो सीधे–सादे गृहस्थी हैं। मैंने गंगोत्री में देखा, वहाँ साधु लोग भी यही करते हैं। बम्बई, अहमदाबाद, दिल्ली व कलकत्ता के सेठ वहाँ पहुँचकर बड़े–बड़े भण्डारे करते हैं। इनमें पूरियाँ बनती हैं, खीर बनती है, हलवा बनता है, माल–पूड़े बनते हैं, कितनी ही दूसरी वस्तुएँ भी बनती हैं। प्रत्येक भण्डारे के पश्चात् लगभग सब साधुओं को अजीर्ण हो जाता है। खा जाते हैं अधिक, फिर दवाइयाँ खोजते हैं। मैं जब कभी गंगोत्री जाता हूँ तो अपने साथ बहुत–सी औषधियाँ ले जाता है और जब कभी देखता हूँ कि भण्डारा करने वाले कोई सेठ जी पहुँच गये हैं तो हाजमे की गोलियाँ बनाने लगता हूँ। मुझे पता है कि भण्डारे के पश्चात् साधुओं को इन गोलियों की आवश्यकता पड़ेगी।

तो भाई मेरे! यह आपका दोष नहीं, इस चटोरी जीभ का दोष है। यह गंगोत्री में रहने वाले साधु को भी खराब करती है, आपको क्यों नहीं करेगी? इसे तो चाट चाहिए, अचार चाहिए और मेरी ये बेटियाँ हैं न! कई बार मुझे ऐसा लगता है कि देश में चाट की कितनी दुकानें हैं वे सब इनके सिर पर चलती हैं। मैं जानता हूँ कि आप भी चाट के शौकीन हैं, परन्तु 'जिसने खाई चाट, उसने पकड़ी खाट।' खाते हैं तो खाओ, बीमार होने के लिए भी तैयार रहो। यदि बीमार होना नहीं चाहते तो फिर मर्यादा से खाओ, उचित भोजन खाओ।

मथुरा में एक पण्डित जी पूरे भोजनभट्ट थे। एक दिन किसी यजमान के यहाँ गये। न्योते पर गये तो इस प्रकार खाने लगे जैसे फिर कभी खाने को मिलेगा नहीं। हलवा, पूरी, कचौरी, दही–बड़े, खीर, पराँठे, मालपूड़े, पकौड़े, रसगुल्ले, लड्डू, इमरती, बर्फी, कलाकन्द, गुलाबजामुन, रसमलाई, रबड़ी– हे मेरे भगवान्! पता नहीं क्या कुछ खाते चले गये। अन्त में पेड़े आये। मथुरा के पण्डितों को पेड़े बहुत अच्छे लगते हैं। पेट में स्थान था नहीं। फिर भी ठूँस–ठूँसकर खाने लगे। एक, दो, दस, बीस, तीस, कितने ही पेड़े वे खा गये। पेट गले तक भर गया। बोलना भी कठिन हो गया। श्वास लेना भी कठिन। ऐसा प्रतीत हुआ कि मरने लगे हैं। यजमान घबराया कि क्या आफत है! जल्दी से नौकरों को बुलवाया कि पण्डित जी को खाट पर डालकर इनके घर छोड़ आओ। पण्डित जी की खाट उठी तो उनकी दृष्टि अब भी पेड़ों के थाल पर थी। परन्तु बोल तो सकते नहीं थे; करते क्या? खाट चली, घर पहुँचे तो पेट में भाँति–भाँति के जो सिपाही उन्होंने भेजे थे वे परस्पर लड़ने लगे। पण्डित जी दर्द से कराह उठे। चिल्लाकर बोले, "मैं मरा!" उनके पुत्र ने पूछा, "बहुत दर्द है क्या?" वे कठिनता से बोले, "बहुत।" पुत्र ने जल्दी से एक वैद्य को बुलाया। वैद्य जी ने पेट देखा, रोग समझा, एक चूर्ण दिया कि "यह खा लो।" पण्डित जी चीखते हुए बोले, "नहीं!" पुत्र ने कहा, "परन्तु आपको दर्द होता है। खा लिया अधिक, पचा है नहीं, चूर्ण खा लीजिये, दर्द ठीक हो जायेगा।"

पण्डित जी ने क्रोध से उसकी ओर देखा। बोल नहीं सके। पुत्र ने फिर कहा, चूर्ण खा लीजिये न!" तब वे दर्द से कराहते हुए बोले, "मूर्ख, चूर्ण का स्थान होता तो एक पेड़ा और न खा लेता?"

इस प्रकार मत खाओ भाई! अपने पर दया करो।

मैं भोजन पर इतना बल देता हूँ तो क्यों? इसलिए कि आज खाने का युग है। ऐसा प्रतीत होता है कि मनुष्य खाने के लिए ही उत्पन्न हुआ है, इसके अतिरिक्त उसे और कोई कार्य ही नहीं। किसी व्यक्ति से

शेष पृष्ठ 4 पर ☞

शरीर को ब्राह्मीय बनाओ

● ओमप्रकाश आर्य

वैदिक पर्वों में श्रावणी पर्व का विशेष महत्व है। यह विद्वानों का पर्व है। स्वाध्याय और चिन्तन का पर्व है। ज्ञान के पुनर्स्मरण का पर्व है। इस पर्व के माध्यम से एक नई चेतना और उत्साह प्राप्त होता है। इससे संप्रेरणा ग्रहण कर अपने को ऋषिज्ञान और वेदज्ञान से ओतप्रोत करो। इससे तुम्हारा शरीर ब्राह्मण का बनेगा। भगवान मनु कहते हैं–

स्वाध्यायनेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः। महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः।। मनु.2/28

अर्थात् "वेदत्रयी का पढ़ना, व्रत, होम, इज्याकर्म, पुत्रोत्पादनादि तथा पंच महायज्ञों और यज्ञों से यह तनु ब्राह्मी होता है। (होम=पर्वादि समय का। इज्या=अग्निष्टोमादि। यज्ञ=पौर्णमासादि। व्रत=सत्य भाषणादि।)"

इस शरीर को ब्राह्मण बनाया जाता है। इसके लिए सात कृत्य बताए हैं– 1. वेदों का पढ़ना (स्वाध्याय करना), 2. सत्य भाषण आदि करना, 3. विभिन्न पर्वों पर होम करना, 4. अग्निष्टोम आदि विशेष यज्ञ करना, 5. सन्तानोत्पादन कर्म, 6. पंच महायज्ञों का करना (ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथि यज्ञ व बलिवैश्वदेवयज्ञ) और 7. पूर्णिमा आदि पर यज्ञ कर्म।

इन कर्मों से यह शरीर ब्राह्मण बनता है। इन कर्मों के अभाव में शरीर ब्राह्मण नहीं कहला सकता। ब्रह्म का अर्थ है– ईश्वर, वेद, ज्ञान और वीर्य। ब्राह्मीय के लिए इनका होना आवश्यक है। ईश्वर का चिन्तन, वेद का अध्ययन, ज्ञान का अर्जन और वीर्य का रक्षण। वैसे तो उक्त कर्म पूरे वर्ष चलते रहते हैं किन्तु पर्व के रूप में इसका प्रारंभ बताते हुए भगवान मनु कहते हैं–

श्रावण्यां प्रौष्ठपद्यां वाप्युपाकृत्य यथाविधि। युक्तश्छन्दांस्यधीयीत मासान्विप्रोऽर्धपंचमान।। मनु.4/95

पुण्ये तु छन्दसां कुर्याद् बहिरुत्सर्जनं द्विजः।

माघशुक्लस्य वा प्राप्ते पूर्वाह्णे प्रथमेऽहनि।। मनु.4/96

अर्थात् "ब्राह्मणादि श्रावणी भाद्रपदी पौर्णिमा को उपाकर्म करके साढ़े चार मास में उद्यत होकर वेदाध्ययन करें। पुष्य नक्षत्र वाली पौर्णिमा (पौषी) में या माघ शुक्ला के प्रथम दिन पूर्वाह्न में वेद का उत्सर्जन कर्म (ग्राम के) बाहर जाकर करे।"

इस प्रकार श्रावणी पर्व का संबंध वेदाध्ययन से है। यह साढ़े चार महीने चलने वाला पर्व है। इसका शुभारंभ श्रावण मास की पूर्णिमा से होता है और उत्सर्जन (समापन) पुण्य नक्षत्र वाली पूर्णिमा के दिन अर्थात् पौष मास या माघ मास के शुक्ला प्रथम दिन होता है। चार साढ़े चार मास चलने वाला यह पर्व लोक में चातुर्मास के नाम से विख्यात है। विडंबना यह है कि इन चातुर्मासों में वेदों का स्वाध्याय तो चलता नहीं, किन्तु अनेक कर्मकांड प्रचलित हो गए हैं। आज आवश्यकता है स्वाध्याय को बढ़ावा देने की, वेद के प्रचार–प्रसार की। स्वाध्याय की महिमा का वर्णन करते हुए भगवान मनु कहते हैं–

यः स्वाध्यायमधीतेऽब्दं विधिना नियतः शुचिः।

तस्य नित्यं क्षरत्येषु पयो दधि घृतं मधुः।। मनु.1/107

अर्थात् "जो पुरुष एक वर्ष पर्यन्त विधियुक्त नियम से पवित्र होकर स्वाध्याय करता है उसके लिए वह स्वाध्याय दूध, दही, घृत और मधु को वर्षाता है।"

विधिपूर्वक किया गया स्वाध्याय निश्चित ही परम फलदायी होता है। इससे कठिन अर्थ भी आसानी से ग्राह्य हो जाते हैं। शनैः–शनैः बुद्धि सूक्ष्म विषय को समझने में समर्थ हो जाती है। आत्मिक आनन्द के लिए स्वाध्याय से बढ़कर अन्य कोई साधन नहीं हो सकता। यह बहुत बड़ा तप है। भगवान मनु कहते हैं–

आ हैव स नखाग्रेभ्यः परमं तप्यते तपः।

यः स्रग्व्यपि द्विजोऽधीते स्वाध्यायं शक्तितोऽन्वहम्।। मनु. 2/167

अर्थात् "जो द्विज पुष्पमाला को भी धारण करे (ब्रह्मचर्य समाप्त करके भी) प्रतिदिन यथाशक्ति वेदाध्ययन करता है वह निश्चय ही नख से शिख तक परम तप करता है। (अर्थात् इससे अधिक कोई तप नहीं है)"

स्वाध्याय को परम तप माना गया है विशेष रूप से वेदाध्ययन। अनध्याय के दिन भी स्वाध्याय की मनाही नहीं है। भगवान मनु कहते हैं–

वेदोपकरणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यके।

नानुरोधेऽस्त्यनध्याये होममन्त्रेषु चैव हि।। मनु. 1/105

अर्थात् "शिक्षादि के पढ़ने और नित्य के स्वाध्याय और होम मंत्रों में अनध्याय के दिन भी मनाही नहीं है।"

स्वाध्याय जीवन का एक अनिवार्य कर्म है। महर्षि पतंजलि ने इसे क्रियायोग की संज्ञा दी है–"तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः।" योग. 2/1 अर्थात् तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान क्रिया योग है। नियमपूर्वक किए गए स्वाध्याय का फल महर्षि पतंजलि ने योगसूत्र में दिया है– 'स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः।' योग. 2/44 अर्थात् "स्वाध्याय से अभिलषित देवता– दिव्य आत्माओं का सम्प्रयोग–सम्बन्ध, मेल–साक्षात्कार होता है।" इसके श्रद्धापूर्वक अनुष्ठान से अनेक बार मस्तिष्क में अचानक इच्छित अर्थ का बोध हो जाता है। ऐसा लगता है जैसे किसी ने अन्तःकरण में उसका अर्थ बता दिया है। इच्छित अर्थ का अवबोध स्वाध्याय से ही होता है। इसलिए नियमपूर्वक स्वाध्याय करना चाहिए।

सम्प्रति भागदौड़ की जिन्दगी में स्वाध्याय कम हो गया है। लोग टीवी के कार्यक्रमों से अपना मन बहला लेते हैं किन्तु जो आत्मिक आनन्द वेद–शास्त्रादि ग्रन्थों के पढ़ने से मिल सकता है वह उसमें नहीं मिल सकता। सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ–साथ अपने जीवन का भी अध्ययन करना चाहिए। अपने जीवन का अध्ययन करने से अपने गुण–दोषों का पता चलता है। हम प्रतिदिन आंकलन करें कि हमने आज कोई अनिष्ट कर्म तो नहीं किया। हमने किसी को कष्ट तो नहीं पहुँचाया। भगवान से नित्य प्रार्थना करें कि हमारी वाणी पवित्र हो, हमारी आँखें पवित्र हों, हमारे कान पवित्र हों, हमारा मन पवित्र हो, बुद्धि उत्तम हो, हमारे हाथ पवित्र रहें, हमारे पैर पवित्र रहें, हम अधिकाधिक लोकोपकार करें। हमारा जीवन अच्छाइयों को समर्पित हो। जीवन परमार्थ में बीत जाए। ऐसे चिन्तन से, ऐसे कर्म से जीवन पवित्र हो जाता है। अन्तकरण में ईश्वर की सत्प्रेरणा का अनुभव होता है। मनुष्य जितना ही पारमार्थिक कार्य करता है उतना ही वह ईश्वर के निकट पहुँचता जाता है। स्वार्थ से ऊपर उठकर परमार्थ का कार्य करके उसकी अनुभूति स्वयं कर सकते हैं। यही स्वयं का अध्ययन है।

श्रावणी पर्व से हम प्रेरणा लें। अपने शरीर को ब्राह्मण बनाएँ। इसके लिए भगवान मनु के निर्देश पर ध्यान दें। स्वयं ब्राह्मण बनें और दूसरों को भी बनाने का प्रयत्न करें।

आर्य समाज रावतभाटा
वाया कोटा (राजस्थान)

☞ *पृष्ठ 3 का शेष*

घोर घने जंगल में

पूछिये, "क्यों जी! क्या हाल है?" तो उत्तर देता है, "अच्छा है, रोटी चली जाती है।" अर्थात् जीवन का एकमात्र उद्देश्य केवल रोटी चलाना है। आप कहेंगे, सब तो ऐसी बात नहीं करते। मैं मानता हूँ। परन्तु कहें या न कहें, चलाते सब रोटी ही हैं। आप प्रातः उठते हैं, नहा–धोकर तैयार होते हैं, कपड़े पहनते हैं। यह सब क्यों करते हैं? इसलिए कि दफ्तर जाना है, दुकान पर जाना है, नौकरी पर जाना है। शाम को वापस आते हैं तो थोड़ा विश्राम करते हैं, घूमने के लिए जाते हैं कि स्वास्थ्य ठीक रहे। रात को सो जाते हैं ताकि दूसरे दिन पुनः श्रमरहित (तरो–ताज़ा) होकर उसी कार्यालय में, उसी दुकान पर, उसी नौकरी पर जायें जहाँ कल गये थे। बस, प्रातः से सायं तक, सायं से रात्रि तक जीवन का वास्तविक उद्देश्य बन गया है दफ्तर जाना, दुकान पर चला जाना, नौकरी पर जाना, और ये दफ्तर, दुकान और नौकरी किसलिए हैं? इसलिए कि मनुष्य की रोटी चलती रहे। कभी–कभी आश्चर्य होता है कि दो समय के भोजन को हमने इतना महत्त्व क्यों दे रखा है? अपने सामाजिक जीवन को देखिये, कोई उत्पन्न हो तो पार्टी, जन्मदिन आये तो पार्टी, नामकरण हो तो पार्टी, मुण्डन–पार्टी, विवाह–पार्टी, कोई व्यक्ति मेम्बर बना तो पार्टी, किसी व्यक्ति की स्मृति मनानी है तो पार्टी, कोई बाहर से आता है तो, और कोई बाहर जाने वाला है।

जहाँ कहीं पार्टी हो वहाँ देखिये कैसे चमकते–दमकते कपड़े पहन कर लोग पहुँचते हैं! सौ को बुलाओ तो डेढ़ सौ उपस्थित; और कहीं सत्संग हो तो वहाँ जाने का अवकाश नहीं मिलता। जाना भी पड़े तो हम सोचते हैं चलो जी! कथा ही में तो जाना है, पन्द्रह–बीस मिनट पश्चात् चले जायेंगे; आरम्भ में तो आनन्द स्वामी इधर–उधर की बातें ही कहता रहता है। और यदि कहीं पार्टी में जाना हो तो पन्द्रह मिनट पूर्व ही पहुँच जाते हैं। इसलिए मैं कहता हूँ यह खाने का युग है। खाने और अपने–आप को सुन्दर बनाने के अतिरिक्त और कोई चिन्ता ही नहीं। वेद में ऐसे लोगों को 'असुतृप' कहा है; प्राणपोषक भी कहा है। जो लोग केवल अपनी इन्द्रियों को तृप्त करने में लगे रहते हैं, जो लोग अपने निकट फैले दुःख और कष्ट को नहीं देखते, जो दूसरे के दुःख को अपना दुःख नहीं समझते अथवा जो दूसरों को भूखा देखकर भी स्वयं खाते रहते हैं, उनके सम्बन्ध में वेद कहता है कि वे पाप खाते हैं, मृत्यु को अपने पास बुलाते हैं–

मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य।

'जो व्यक्ति स्वयं खाता है और दूसरों को भूखा देखता है वह, मैं सत्य कहता हूँ, अपने पास मृत्यु को बुलाता है।'

अतः यदि मृत्यु को नहीं बुलाना है, पाप नहीं खाना है तो बाँटकर खाओ। खाओ अवश्य। सौ हाथों से कमाओ परन्तु अपने कमाए हुए को हजार हाथों से बाँट दो ताकि अन्य को भी सुख मिले। जो लोग ऐसा करते हैं वे ही मनुष्य हैं। जो ऐसा नहीं करते, वे और भले कुछ हों, मनुष्य नहीं।

शेष अगले अंक में....

वैज्ञानिक युग में - अवैज्ञानिक मान्यताएँ

● अर्जुनदेव स्नातक

आज विज्ञान का युग है। सृष्टि के अज्ञात रहस्यों का नियमित, व्यवस्थित, बुद्धिगम्य अन्वेषण का नाम विज्ञान है। इस वैज्ञानकि युग में प्राचीन ऋषि–मुनियों द्वारा अन्वेषित तथ्यों की कतिपय वैज्ञानिक साधनों द्वारा परीक्षा की, उन तथ्यों को सत्य एवं विज्ञान सम्मत प्राप्त किया। निश्चय से सत्य की कसौटी पर परीक्षित ऋषि–मुनियों द्वारा वर्णित सृष्टि के नियम, वैज्ञानिक नियम कहलाते हैं। ऋषि–मुनियों द्वारा अन्वेषित तथ्यों का आधार ईश्वरीय ज्ञान वेद रहा है। आधुनिक युग के निर्माता स्वामी दयानन्द ने समस्त विश्व को विज्ञान सम्मत वेद मार्ग पर चलने का आह्वान करते हुए आर्यसमाज की स्थापना की। उन्होंने आर्य समाज की प्रगति के लिए विश्व ने समस्त मानवों के कल्याण के लिए प्रमुखतया दस नियम निर्धारित किये। उनमें सबसे पहला नियम है–

"सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते है, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है"।

आश्चर्य यह है कि संसार में सत्य एवं ऋत नियमों (अपरिवर्तनीय नियमों) के रहते हुए भी हम बुद्धिहीन अज्ञान से परिपूर्ण अन्धविश्वासों वाली अवैज्ञानिक मान्यताओं को पूर्ण विश्वास के साथ अपनाते हुए हैं। आचार्य रजनीश ने एक पुस्तक में लिखा है–

"अतीत का अन्धविश्वास से भरा ज्ञान विकासशील मस्तिष्क के लिए जंजीर बन जाता है।"

रजनीश के इस विचार का प्रत्यक्ष वर्तमान में अनेक पढ़े लिखे विज्ञानवेताओं में प्राप्त होता है। जिसने भूगाले विषय में एम.ए. पी.एच.डी की है वह विद्यालय में छात्रों को विज्ञान के आधार पर पढ़ाता है कि जो स्वयं प्रकाशित होते हैं उनकी संज्ञा नक्षत्र है। इस आधार पर सूर्य नक्षत्र है। चन्द्रमा पृथिवी का चक्कर काटने से उपग्रह है। यह ज्ञान विद्यार्थियों को देता है। घर आकर वही अध्यापक कक्षा आठ, दस पास पंडित के यह कहने से आप पर सूर्य ग्रह का प्रकोप है, चन्द्र ग्रह भी आपके लिए अशुभ करने वाला है– उस समय सूर्य नक्षत्र है तथा चन्द्र उपग्रह है, इस बात को भूल जाता है तथा सामान्य पढ़े लिखे के कथनानुसार ग्रहों की शान्ति के लिए अनुष्ठान कराता है। यह कृत्य सर्वथा अवैज्ञानिक है। अन्य अनेक अवैज्ञानिक मान्यताएँ इस समाज में अर्थात् समस्त विश्व में व्याप्त हैं। आइये, संक्षेप में उन पर विचार करते हैं:–

गंगा स्नान, तीर्थ–भ्रमण, अस्थि प्रवाह

अनेक लोगों की मान्यता है कि गंगा स्नान से कृत पाप नष्ट होते हैं, यही विचार तीर्थों में भ्रमण करने से माना जाता है। मृत्यु के बाद नदी विशेष में अस्थि–प्रवाह करने से मृत आत्मा को मोक्ष प्राप्त होता है। तीर्थ–यात्रा करने से पुण्य होता है, सारे पाप नष्ट होते हैं। क्या उक्त बातें विज्ञान सम्मत हैं?

प्रथम गंगा–स्नान तथा अस्थि–प्रवाह पर विचार करते हैं। जल शरीरादि को स्वच्छ करता है, मन की मलिनता को नहीं। फिर हम यह भी देखते हैं कि किये हुए कर्म कभी समाप्त नहीं होते हैं, उनका फल अवश्य मिलता है। थोड़ा विचार करें गलती से बबूल के बीज बोये– अब उस पर कितना ही गंगाजल डालें, प्रार्थना करें, विशेष अनुष्ठान करें क्या बबूल के स्थान पर आम लगेंगे, आम का वृक्ष उगेगा? यह कभी संभव नहीं है फिर नदी विशेष में स्नान करने से पाप नष्ट होते हैं, यह मान्यता तथा तीर्थादि भ्रमण से पाप नष्ट होते हैं, यह मान्यता अवैज्ञानिक है। कबीर ने लिखा है –

तीरथ चाले दोउ जना चित चंचल मन चोर।
एकौ पाप न उतारिया दस मन लाये और।।

कैसे आश्चर्य की बात कि सब को पवित्र करने वाली गंगा को पवित्र करने की चिन्ता तथाकथित साधुओं को हो रही है। वे साधु गंगा जल पीकर पवित्र होने का उपदेश औरों को देते हैं तथा स्वयं क्या करते हैं–

स्वयं कुम्भादि मेलों पर बिसलरी का पानी पीते हैं! थोड़ा विचार करें मोक्ष किसे कब मिलता है– उपदेश में सभी कहते हैं सत्कर्म–निष्काम कर्म मोक्ष देते हैं फिर अस्थि जिसमें आत्मा नहीं है गंगादि में डालने से मोक्ष कैसे प्राप्त करेंगी। सत्य तो यह है कि उक्त मान्यता अवैज्ञानिक है।

फलितज्योतिष–ग्रह शान्ति–शुभ–अशुभ मुहूर्त

ज्योतिष में गणित ज्योतिष तो सृष्टि के ऋत नियमों के आधार पर होने से सत्य है। ग्रहण कब कहाँ होगा, सूर्योदय–सूर्यास्त किस दिन कब होगा– आदि ज्ञान विज्ञान समस्त होने से सत्य है। फलित ज्योतिष अमुक राशिवाला सुखी या दुखी होगा पूर्णतया असत्य है। सुख–दु:ख कर्मानुसार तथा मनकी अनुकूलता तथा प्रतिकूलता पर आधारित है। ज्योतिषियों को हाथ दिखाकर भविष्य फल जानना, अमुक शुभ या अशुभ मुहूर्त है आदि बातें सारी अवैज्ञानिक हैं। राशि के ञ,ण,ढ,ठ,ङ अक्षर होते हैं इन पर कौन सार्थक नाम रखता है? जन्म पत्री कक्षा आठ–दस पास पंडित बनाता है– बहुत पढ़ा लिखा पंडित बनाता है, सब असत्य होता है– केवल रुपये कमाने के धंधे हैं। हाथ देखकर भविष्य बताने वाले ज्योतिषी पर किसी ने सत्य लिखा है–

नजूमी राह में बैठा किस्मत बताता है
दर हकीकत वह किस्मत अपनी ही बनाता है।
बज़ाहिर देखता है हाथ वो दुनियावालों के
जब गौर से देखा तो वह हाथ अपने ही दिखाता है।

ग्रह जड़ हैं, इनकी शान्ति के लिए की गई प्रार्थनाएँ ये सुन सकेंगे? करोड़ो मील दूर स्थित ये ग्रह हैं, भूमि पर बैठे हुए पंडित को इनकी क्रूरता, इनकी शान्ति दिखाई देती है? कैसी कल्पना है, कैसा अन्धविश्वास है।

शुभ मुहूर्त, अशुभ मुहूर्त की जानकारी इन पंडितों को होती है। तभी अधिकांश पढ़े–लिखे नेता–अभिनेता शुभ मुहूर्त की जानकारी प्राप्त करके अपना कार्य करते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद छ: सौ देशी रियासतों के पंडित लोग अपने अपने राजाओं को न बता सके कि रियासतें समाप्त होने वाली हैं फिर भी हम अन्धविश्वास में फँसे हुए हैं।

देव सो गये हैं, कोई शुभ कार्य इन दिनों न करें, यह मान्यता भी अवैज्ञानिक है। सूर्य देवता, चन्द्रमा देवता, वायु देवता, अग्नि देवता, नक्षत्र देवता आदि अन्य अनेक देवता अपने नियम को न छोड़कर कार्य में रत हैं, फिर कौन सा देवता सो गया है। इनमें से कोई भी देवता अपने नियत कार्य को छोड़ेगा तो संसार के कार्य केसे चलेंगे? इस पर विचार करें, अन्धविश्वास में न फंसे।

हमारे बालक के विवाह की तारीख निश्चय होने के बाद दूसरे दिन कन्या पक्ष का फोन आया– देव सो गये हैं– अत: देवों के जागने पर तीन महीने बाद विवाह हो सकेगा। हमने जब सुना तो हम तुरन्त कन्या पक्ष के घर गये। पहले उनकी उक्त बात सुनी, फिर हमने कहा कौन से देव सो गये? सूर्य–चन्द्र–वायु–आकाश–अग्नि आदि देवों में कौन सा देव सो गया है? अगर सो गया है तो अग्नि में हाथ डालें तो नहीं जलना चाहिए। सूर्य की किरणें गरम हैं या ठण्डी? ये नियम से उदय अस्त हो रहे हैं आदि बातें सुनकर विवाह निश्चित तिथि में करने को वे सहमत हो गये।

विवाह में पंडित गुण मिलाते हैं– वर–कन्या के सुख का योग बताते हैं– नवजात शिशु का जन्म पत्र बनाकर आयु 70–80 बताते हैं आदि। जब वर–कन्या में बनती नहीं या कोई भयंकर संकट आता है तथा जन्म–पत्र वाले बालक पाँच–छ: वर्ष में ही मृत्यु होती है तब पंडित जी से पूछें तो यही उत्तर देंगे–

'दैव इच्छा बलीयसी' भाग्य बलवान है, ईश्वर के नियम के आगे हमारी कहाँ चलती है। जब कर्मानुसार ईश्वरीय व्यवस्था है तो इस अवैज्ञानिक मान्यता में हम पढ़े लिखे क्यों फंसे है?

जड़ को चतेन समझकर व्यवहार करना अवैज्ञानिक

आज संसार में मूर्ति पूजा प्रचलित है, क्या यह वैज्ञानिक दृष्टि से ठीक है? थोड़ा इस पर विचार करें– एक उत्तम कुशल चित्रकार के पास जाकर हमने कहा हमारे बाबा का चित्र बना दें। चित्रकार बोले– उनका कोई पुरा चित्र (फोटो) आपके पास हो तो लायें बना देंगे। हमने कहा– हमने उन्हें देखा भी नहीं है, न उनका कोई चित्र ही हमारे पास है। चित्रकार बोले– बिना चित्र के हम उनका चित्र नहीं बना सकते। एक अच्छा चित्रकार भी बिना देखे हुए का चित्र बनाने में असमर्थ है तो वेद वर्णित– **"न तस्य प्रतिमा अस्ति'** तथा **'सपर्यगाच्छुकमकायमव्रणमस्नाविरं."** जिसको किसी ने उसकी मूर्ति न होने से देखा नहीं तथा सर्वव्यापक वह ईश्वर शरीर रहित नस नाड़ियों के बन्धन से रहित है तो उसकी मूर्ति कैसे बन सकती है? इस आधार पर मूर्तिपूजा निरर्थक है।

मूर्तिपूजा अवैज्ञानिक इसलिए भी है कि वेदों के अतिरिक्त–दर्शनशास्त्रों, ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों, रामयण, महाभारतादि किसी भी प्राचीन ग्रन्थ में जड़ मूर्ति पूजा का विधि–विधान नहीं मिलता है। शंकराचार्य, कबीर, नानक, तुकाराम आदि सन्तों ने इसे उचित नहीं माना है। सत्य तो यह है कि वह निराकार है हमने उसकी आकृति बना दी। इससे सारी व्यवस्था उलट गई– जो हमें खिलाता है– उसे हम भोग लगाने लगे, जाड़ों में रजाई उढ़ाने लगे, मेवों का प्रसाद चढ़ाने लगे, गर्मियों में ऐसी, कूलर की व्यवस्था करने लगे– जो ईश्वर इनको हमें प्रदान करता है– हम उसे देते हैं– मान करते हैं या अपमान?कोई निर्धन धनवान को एक पैसा दान दे तो मान या अपमान?

इसके अतिरिक्त पंडितों की कथा में यह सुनकर शिव के गण आयेंगे शत्रुओं का विनाश करेंगे इस अवैज्ञानिक अन्धविश्वास से सोमनाथ आदि मन्दिरों का विध्वंस हुआ। सुवर्णादि धन वैभव के

शेष पृष्ठ 6 पर ☞

www.thearyasamaj.org

सब मनुष्य ईश्वर के सहाय की इच्छा करें

● संकलन एवं सम्पादन : स्वामी ध्रुवदेव परिव्राजक

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि।।

(यजु. अ. 1/मं. 5)

व्याख्यान 1. –

इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि सब मनुष्य लोग ईश्वर के सहाय की इच्छा करें, क्योंकि उसके सहाय के बिना धर्म का पूर्ण ज्ञान और उसका अनुष्ठान पूरा कभी नहीं हो सकता।

हे व्रतपते! सत्यपते परमेश्वर! (व्रतं) मै जिस सत्यधर्म का अनुष्ठान करना चाहता हूँ उसकी सिद्धि आपकी कृपा से हो सकती है। श.ब्रा. में इस मन्त्र का अर्थ लिखा है कि – "जो मनुष्य सत्य के आचरणरूप व्रत को करते हैं वे 'देव' कहाते हैं, और जो असत्य का आचरण करते हैं उनको 'मनुष्य' कहते हैं।" इसलिए मैं सत्यव्रत का आचरण करना चाहता हूँ। (तच्छके) मुझ पर आप ऐसी कृपा कीजिए कि जिससे मैं सत्यधर्म का अनुष्ठान पूरा कर सकूँ। (तन्मे राध्यताम्) उस अनुष्ठान की सिद्धि करने वाले एक आप ही हो। सो कृपा से सत्यरूप धर्म के अनुष्ठान को सदा के लिए सिद्ध कीजिए। (इदमहमनृतात्) सो वह व्रत है जिसको मैं निश्चय से चाहता हूँ उनका सब असत्य कामों से छूट के सत्य के आचरण करने में सदा दृढ़ रहूँ।

परन्तु मनुष्य को यह करना उचित है कि ईश्वर ने मनुष्यों में जितना सामर्थ्य रखा है, उतना पुरुषार्थ अवश्य करें। उसके उपरान्त ईश्वर के सहाय की इच्छा करनी चाहिए। क्योंकि मनुष्यों में सामर्थ्य रखने का ईश्वर का यही प्रयोजन है कि मनुष्यों को अपने पुरुषार्थ से ही सत्य का आचरण अवश्य करना चाहिए। जैसे कोई मनुष्य आँख वाले पुरुष को ही किसी चीज को दिखला सकता है, अंधे को नहीं। इसी रीति से जो सत्यभाव, पुरुषार्थ से धर्म को करना चाहता है, उस पर ईश्वर भी कृपा करता है अन्य पर नहीं। क्योंकि ईश्वर ने धर्म को करने के लिये बुद्धि आदि साधन जीव के साथ रखें हैं। जब जीव उनसे पूर्ण पुरुषार्थ करता है, तब परमेश्वर भी अपने सब सामर्थ्य से उस पर कृपा करता है, अन्य पर नहीं। क्योंकि सब जीव कर्म करने में स्वाधीन और पापों के फल भोगने में कुछ पराधीन भी है।

ऋ.भा.भू. वेदोक्तधर्मविषय)

व्याख्यान 2.–

हे सच्चिदानन्द स्वप्रकाशस्वरूप ईश्वराग्ने! ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासादि सत्यव्रतों का आचरण मैं करूँगा। सो इस व्रत को आप कृपा से सम्यक् सिद्ध करें तथा मैं अनृत=अनित्य देहादि पदार्थों से पृथक् होके इस यथार्थ = सत्य जिसका कभी व्यभिचार = विनाश नहीं होता, उस विद्यादिलक्षण धर्म को प्राप्त होता हूँ। इस मेरी इच्छा को आप पूरी करें जिससे मैं सभ्य, विद्वान्, सत्याचरणी आपकी भक्तियुक्त धर्मात्मा होऊँ।

(आर्याभिविनय)

पदार्थ (अन्वय सहित) –

हे (**व्रतपते**) सत्यभाषणादि व्रतों के पालक! (**अग्ने**) सत्यधर्म के उपदेशक ईश्वर! (**अहम्**) धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त करने की इच्छा वाला मैं जो (**इदम्**) इस सत्यव्रत को (**अनृतात्**) मिथ्याभाषण, मिथ्याचरण, मिथ्या बात को मानने से अलग होकर (**सत्यम्**) जो वेद विद्या, प्रत्यक्षादि प्रमाणों, सृष्टिक्रम, विद्वानों का संग, श्रेष्ठ विचार और आत्म शुद्धि के द्वारा जो भ्रान्ति से रहित, सबका हितकारक, तत्त्व–निष्ठ सत्प्रभव है और जो अच्छी प्रकार परीक्षा करके निश्चय किया जाता है, जो (**व्रतम्**) सत्य भाषण, सत्याचरण, सत्यमानना रूप व्रत है उसका (**चरिष्यामि**) पालन करूँगा (**तत् मे**) मेरे उस व्रत का अनुष्ठान और पूरा होना आपकी कृपा से (**राध्यताम्**) सिद्ध हो। जिसे (**उपैमि**) जानने, प्राप्त करने व आचरण में लाने के लिए (**शकेयम्**) समर्थ होऊँ (**तत्**) यह व्रत भी सब आपकी कृपा से (**राध्यताम्**) सिद्ध हो।

(ऋट. दया. कृत यजुर्वेदभाष्य अ. 1/म. 5)

भावार्थ –

ईश्वर सब मनुष्यों के पालन करने योग्य धर्म का उपदेश करता है जो न्याय, पक्षपातरहित, सुपरीक्षित, सत्य लक्षणों से युक्त, सर्वहितकारी, इस लोक व परलोक के सुख का हेतु है वही धर्म सब मनुष्यों को सदा आचरण करने योग्य है और जो इससे विरुद्ध अधर्म है उसका आचरण कभी किसी को नहीं करना चाहिए। इस प्रकार सब प्रतिज्ञा करें – हे परमेश्वर! हम वेदों में आप से उपदिष्ट इस सत्यधर्म का आचरण करना चाहते हैं। यह हमारी इच्छा आपकी कृपा से अच्छी प्रकार सिद्ध होवे। जिससे हम अर्थ, काम, मोक्ष रूपफलों को प्राप्त कर सकें और जिससे अधर्म को सर्वथा छोड़कर अनर्थ, कुकाम, बन्धरूप दुःख फल वाले पापों को छोड़ने और छुड़ाने में समर्थ होवें।

जैसे आप सत्यव्रतों के पालक होने से व्रतपति हैं वेसे ही हम भी आपकी कृपा से, अपने पुरुषार्थ से यथाशक्ति सत्य व्रत के पालक बनें। इस प्रकार सदा धर्म करने के इच्छुक, शुभ कर्म करने वाले होकर सब सुखों से युक्त व सब प्राणियों को सुख देने वाले बनें। ऐसी इच्छा सब सदा किया करें।

(ऋ. दया. कृत यजुर्वेदभाष्य अ. 1/म.5)

दर्शन योग महाविद्यालय
आर्यवन, रोजड, पत्रा.–सागपुर,
जि.–साबरकांठा (गुजरात) 383307
02770–287418, 287518

☞ *पृष्ठ 5 का शेष*

वैज्ञानिक युग में – ...

साथ तथाकथित पंडितों की जो हानि या दुर्दशा हुई, वह सब जानते हैं, फिर भी हम मूर्ति–पूजा के अन्ध विश्वास में फँसे हुए है। हम भारतवासी वीर होते हुए भी इस अवैज्ञानिक जड़ मूर्ति पूजा के कारण पराधीन हुए। स्वामी दयानन्द ने सत्य ही लिखा है कि जड़ की पूजा करने से अन्तःकरण में जड़त्व का भाव आ जाता है। बुद्धि जड़ हो जाती है, सोच विचार कर कार्य करने की शक्ति समाप्त हो जाती है।

योगदर्शन के व्यास भाष्य में पूजा का अर्थ लिखा है– 'पूजनं नाम सत्कारः' अर्थात् यथोचित व्यवहार को पूजा कहते हैं। जड़ को जड़ समझकर उससे वैसा–व्यवहार करना चाहिए। जो जड़ आपके द्वारा किये गये व्यवहार को न जानता है, न समझता है, न,आशीर्वादादि देता है उसकी पूजा वैज्ञानिक नहीं अवैज्ञानिक है। इस अवैज्ञानिकता के कारण चेतन माता–पिता, आचार्य आदि वृद्ध जन उपेक्षित हो गये हैं। जिनको खिलाने से, जिनका यथोचित सत्कार करने से हमें आशीर्वाद मिलता है– वे आज मूर्तिपूजा के कारण उपेक्षित हो गये हैं। जो खा सकते है, जिन्हें भोजनादि से तृप्ति हो सकती है, उनकी ओर हमारा ध्यान नहीं। आज जो देश भर में वृद्धाश्रम बन रहे हैं, क्या यह हमारे लिए गौरव की बात है। किसी कवि का वचन है–

यं माता पितरौ क्लेशं सहेते सम्भवे नृणाम्।
न तस्य निष्कृति कर्तुं शक्या वर्ष शतैरपि।।

सामर्थ्यशाली मनुष्य के रहने पर भी जिसके माता–पिता कष्ट में रहते हैं, उसका कोई प्रायश्चित नहीं है, उसका कल्याण कभी संभव नहीं है। इस अन्धविश्वास जन्य अवैज्ञानिक जड़ पूजा ने– "मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव" आदि पुण्यप्रद भावों को समाप्त कर दिया। जिन माता–पिता आदि की कृपा से, स्नेह से, सहयोग से, समर्पण भाव से हम इतने बड़े, सामर्थ्यशाली बने हैं, उनकी उपेक्षा करने वाले उनका यथोचित सत्कार न करने वाले क्या हम ईश्वर भक्त हो सकते हैं। अतः जड़ मूर्ति की इस अवैज्ञानिक पूजा को त्यागकर जीवित चेतन माता–पिता तथा वृद्धजनों का आदर करना चाहिए।

सत्य तो यह है कि इन अवैज्ञानिक अन्धविश्वासों को त्याग कर हमें वेद मार्ग का अनुसरण करना चाहिए–

सं श्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि।

(अथर्व.1–1–4)

सन्त तुलसीदास 'रामचरित मानस' में लिखते हैं–

वरनाश्रम निज–निज धरम निरत वेद–पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं, न भय शोक न रोग।

और भी–

सब नर करहिं परस्पर प्रीति।
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति रीति।।

युगों तक भारतीय जन वेद के शाश्वत सत्य वैज्ञानिक मार्ग पर चलते रहे, तब भारत ने 'विश्व गुरु' की गौरवमय संज्ञा प्राप्त की थी। मनु ने घोषणा की–

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।

भारतीय श्रेष्ठ जनों से भू मण्डल के सभी मानवों ने चरित्र की शिक्षा प्राप्त की। जब हम वेद वर्णित वैज्ञानिक सत्य मार्ग पर चलते रहे तभी 'आदर्श राम राज्य' की स्थापना कर सके थे।

वर्तमान में छल–कपट, ईर्ष्या–द्वेष, स्वार्थ वृत्ति, भोग भावना तथा संग्रह वृत्ति की भावना हमारे अन्दर व्याप्त है। साथ ही भाई–भाई का विरोध, वृद्धजनों की अपेक्षा वृत्ति,असुरक्षा का भाव यह सब अवैज्ञानिक अन्धविश्वासों की देन है। बड़े बड़े शिक्षित व्यक्ति, पंडित समुदाय, वैज्ञानिक, शासक वर्ग भी इस अवैज्ञानिक मार्ग पर चल रहे हैं। वेद के शाश्वत् सत्य मार्ग पर चलने के लिए अन्धविश्वासों को दूर करने के लिए हमें एक बार स्वामी दयानन्द लिखित 'सत्यार्थ प्रकाश' का अध्ययन करना चाहिए।

5, सीताराम भवन, फाटक,
आगरा कैण्ट 282001
मो. 08909347329

श्रावणी पर्व एवं रक्षाबन्धन

● डॉ० अशोक आर्य

भारत ऋषियों मुनियों की धरती होने का गौरव रखता है। आदि सभ्यता की उद्‌गम स्थली होने का गौरव भी भारत को ही है। हमारे ऋषियों ने समय समय पर मानव को संस्कारित करते रहने के लिए इन्हें अपना कर्तव्य बोध करवाने के लिए, कुछ सीखते रहने की परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए अनेक पर्वों, त्योहारों व उत्सवों की एक लड़ी सी बनाई है। इन उत्सवों को मनाने की एक नियमावली जो हमारे ऋषियों ने दी है, उसके माध्यम से हम जाने में ही नहीं अनजाने व अनचाहे भी बहुत से उपकार, नवनिर्माण व धर्म के उत्थान के कार्य कर जाते हैं जो हमें अपने साधारण जीवन की दैनिक व्यस्तताओं की अवस्था में कर पाना सम्भव नहीं हो पाता। ऐसे ही पर्वों में श्रावणी उपाकर्म तथा रक्षाबन्धन भी एक है।

भारत में चौमास के नाम से प्रसिद्ध चार महीने ऐसे होते हैं, जिन में वर्षा के कारण अनेक भूमिगत व जहरीले जीव भूमि से बाहर निकल आते हैं। इस अवस्था में सुरक्षा की दृष्टि से प्राचीन काल से ही ऋषिगण जंगलों से निकल कर नगरों में आकर किसी स्थान को केन्द्र बना कर आवास करते हैं तथा अपने अनुभव, स्वाध्याय तथा परिश्रम से उन्होंने जो ईश्वरीय ज्ञान एकत्र किया होता है, उसे वह अपनी सेवा सुश्रूषा के बदले जन सामान्य को बांट देते थे। आर्य समाज में भी यही परम्परा स्थापित करते हुए श्रावणी उपाकर्म का विधान किया गया है। इसे श्रावणी इसलिए कहा जाता है, क्योंकि श्रावण माह भी इन्हीं चार महीनों में आता है। श्रावण महीना अत्यधिक वर्षा का महीना होता है। सभी जलाशय नदी नाले न केवल भरे ही होते, हैं अपितु उफान पर होते हैं। ऐसे में सभी प्रकार के कार्य बाधित होते हैं,चाहे वह कृषि का क्षेत्र हो अथवा व्यापार का। अतः आर्य समाज में इस महीने में यज्ञ, हवन व वेद प्रचार की परम्परा स्थापित की है तथा प्रत्येक आर्य समाज में इन दिनों वेद प्रचार सप्ताह व कथा का आयोजन किया जाता है।

यह उल्लास का पर्व है। उल्लास एक ऐसी सुगन्ध है जिस का जितना प्रयोग करो यह बढ़ती ही चली जाती है। यही कारण है कि ऋषियों ने जो सुगन्ध वर्ष भर के प्रयास से एकत्र की होती है, इस पर्व पर वे इसे जन सामान्य में बांट देते हैं। यही कारण है कि यूनान, मिस्र जैसे राष्ट्रों के नष्ट होने पर भी सर्वाधिक प्राचीन यह भारत राष्ट्र आज भी न केवल जीवित है अपितु आज भी विश्व का एक बड़ा भाग इससे मार्ग दर्शन पा रहा है।

श्रावणी की पूर्णिमा वास्तव में ज्ञान की साधना का समय है। इस पर्व पर न केवल हम आध्यात्मिक रूप से ही जागृत होते हैं अपितु आधिभौतिक व आधिदैविक तापों से बचने के लिए भी कार्य व साधना करते हैं। इस महीने की पूर्णिमा को रक्षा बन्धन पर्व के रूप में भी मनाते हैं। यह प्रतिज्ञा का पर्व है। इस पर्व पर हम अपना यज्ञोपवीत स्नान करके बदलते हैं, जो हमारे तीन ऋणों की, तीन कर्तव्यों की पुनः स्मृति करवाता है। हम हवन करते हैं। इसी अवसर पर बहिन अपने भाई की सुरक्षा की कामना करते हुए, ईश्वर से उस के दीर्घजीवी होने की प्रार्थना करते हुए अपने भाई की कलाई में राखी बांधती है, जिस की वर्ष भर भाई प्रतीक्षा कर रहा होता है। राखी के धागे के तारों का बन्धन कोई साधारण बन्धन नहीं होता, यह जीवन में एक प्रतिज्ञा धारण करने का, एक संकल्प लेने का, क्षण होता है, जिस से भाई बहिन का स्नेह बढ़ता है। उनकी यदि कोई कटुता रही हो तो वह कम होती है अथवा समाप्त हो जाती है और भविष्य में एक दूसरे की रक्षा करने का संकल्प लेते हैं।

आज रक्षाबन्धन का यह पर्व दूषित बन कर रह गया है, यह मात्र एक परिपाटी बन गया है। जिस पर्व में वैमनस्य समाप्त करना होता है, उस पर्व में बहिनें भाई से कुछ पैसे लेने की इच्छा रखती हैं, अनेक बहिनें तथा अनेक भाई बीती कटुता को बढ़ाने का कारण है। सरकार ने बाप की सम्पति में बेटी को समान अधिकार दे कर भाई बहिन में कटुता को याद कर के समीप आने का अवसर खोने लगे हैं। सरकारी विधि विधान भी इस कटुता पैदा कर दी है किन्तु अच्छी व समझदार बहिनों ने त्याग दिखाते हुए, इस कटुता को भाई बहिन के बन्धन में नहीं आने दिया।

श्रावण महीने में एक लम्बा या यूं कहें कि पूरा महीना जो यज्ञ किया जाता है यह पर्व उसकी पूर्णाहुति है। आषाढ़ मास की गुरु पूर्णिमा के माध्यम से हम अपनी आध्यामिक शक्ति को बढ़ाने के लिए गुरु के प्रति आदर समर्पण करते हैं, उसी के परिणाम स्वरूप श्रावन महीने की पूर्णिमा पर गुरु ठीक उसी प्रकार हमें रक्षा सूत्र प्रदान करता है जिस प्रकार बहिन अपने भाइयों को राखी बांध कर प्राप्त करती हैं। यह वास्तव में गुरु से प्राप्त आर्शीवाद ही तो होता है। इस प्रकार तीनों ऋणों से उऋण होने के संकल्प के पश्चात् हम गुरु का सत्कार करते हैं, जिसके बदले में गुरु हमे आशीर्वाद स्वरूप तीन धागों का यह रक्षा कवच प्रदान करता है।

यह पर्व न केवल गुरु की ही अपितु आश्रम की भी सेवा व व्रतों व नियमों में रहने के साथ ही साथ शास्त्रों के अध्ययन का मार्ग भी देता है। यह पर्व हमें केवल तिथि विशेष से बँधकर ही नहीं अपितु जीवन का अंग बनाकर निरन्तर मनाते रहना चाहिये क्योंकि यह एक व्रत है, जिसे पूर्ण करना हमारा कर्तव्य है। व्रत पूर्ति के लिए जीवन का कोई भी क्षण लगा सकते हैं।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इस पर्व को वेद प्रचार व प्रसार का पर्व कहा है। महर्षि ने "वेद का पढ़ना पढ़ाना तथा सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म" माना है। अतः यह साधारण धर्म ही नहीं अपितु परम धर्म भी है कि श्रावणी उपाकर्म के अन्तर्गत हम वेदों का न केवल विशेष रूप से श्रवण ही करें बल्कि इन दिनों खूब स्वाध्याय करें। यदि हम श्रावणी पर स्वाध्याय करते हैं तो हम इस पर्व को पूर्ण तथा सार्थक कर रहे हैं क्योंकि स्वाध्याय ही श्रावणी की सार्थकता है। अतः हम सभी मिल कर श्रावणी उपाकर्म के महत्व को समझते हुए इस पर्व पर आवश्यम्भावी रूप से स्वाध्याय आरम्भ कर दें।

104 शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी 201010
गाजियाबाद (भारत)
चलभाष : 09354845426

देश शक्तिशाली होकर भी कमजोर क्यों है?

● डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे

प्रकृति ने भारतवर्ष पर अन्य देशों की तुलना में दिल खोलकर प्राकृतिक सम्पदा लुटाई है। उपजाऊ जमीन, जंगल ऋतुओं का समतोल, तीनों ओर से समुद्र, खनिज पदार्थ, नदी, पहाड़ इत्यादि हृदय खोल कर इस देश को प्रदान किया है। सांस्कृतिक विचारधारा, वेदों का आदिज्ञान तथा मानव कल्याण की परम्परा से सदियों यहाँ पुष्पित और पल्लवित हो रही है। सही अर्थ में देखा जाय तो हमारा देश प्राकृतिक, भौतिक और सांकृतिक संपत्तियों का भण्डार रहा है और आज भी है।

सामाजिक क्षेत्र में यह देश किसी से कम नहीं रहा है। यहाँ के राजा महाराजाओं ने अपने शौर्य और पराक्रम से इस देश पर हुए मध्यपूर्व के आक्रमणों से रक्षा की है। हाँ इतना जरूर है कि सातवीं शताब्दी में हुए मुस्लिम धूर्त आक्रान्ताओं से इस देश को 700 वर्षों तक गुलामी सहन करनी पड़ी। इसमें मध्य पूर्व काल में आयी जड़ता कारणीभूत हो सकती है। कुल मिलाकर हमारे योद्धाओं ने अपने शौर्य और पराक्रम से उत्तर पश्चिम की सीमाओं को विदेशी आक्रान्ताओं से बचाये रखा। उस काल में भी सामाजिक साधनों से हमारा देश परिपूर्ण था और आज भी है। आज हमारे राष्ट्ररक्षा के साधनों से हमारा देश परिपूर्ण था और आज भी है। आज हमारे राष्ट्ररक्षा के साधन विपुल और सक्षम हैं। विभिन्न अस्त्रों से केवल अणुबम्ब जैसे शत्रुराष्ट्र संहारक हथियार हमारे हाथ में हैं। आज हम एशिया खण्ड में चीन के पश्चात् सभी देशों में अणवस्त्र धारी और बलशाली हैं। इतना सब कुछ होते हुए भी हम कमजोर हैं यह हमारा मत न होकर पड़ोसी देशों का और यहाँ की जनता का मत है।

यह कमजोरी इस देश की नहीं, यहाँ की जनता की नहीं, यह कमजोरी नेताओं द्वारा बनायी गयी मानसिक और कृत्रिम है। जैसे कोई दुर्बल व्यक्ति अपने हाथों में अत्याधुनिक शस्त्र लेकर भी उसको चला नहीं सकता, जिसकी मानसिकता सशक्त नहीं है, वह निडर होकर शत्रु पर आक्रमण नहीं कर सकता कुछ इसी तरह की मानसिकता वाले नेता हमारे देश को कमजोर बनाये हुए हैं। क्या हमारे रक्षामंत्री, विदेश मंत्री और प्रधानमंत्री ने अपनी देहबोली, अपने व्यक्तित्व और वक्तव्य से शत्रुराष्ट्र को कभी सोचने के लिए मजबूर किया है? क्या उनकी वाणी में वह तेज है जिसे सुनकर शुत्रओं के पसीने छूट गये हों? ऐसा कभी नहीं हुआ है। राजनीति में नेताओं के हावभाव और व्यवहार बहुत महत्वपूर्ण होता है जो सामने के व्यक्ति पर अनुकूल और प्रतिकूल प्रभाव डालता है। आधी समस्याएं तो नेताओं की वाणी से सुलझ जाती हैं। जैसे देश के पहले गृहमंत्री सरदार बल्लभभाई पटेल के वक्तव्य और व्यवहार से सुलझ गयी थीं। 565 रियासतों का एक संघ भारत में शामिल करना कोई आसान काम नहीं था जो उन्होंनें बड़ी दृढ़ता के साथ किया। सिर्फ एक कश्मीर का मामला पं. जवाहरलाल नेहरू को सौंपा गया था जिसका परिणाम आप जानते ही हैं।

तो मैं कह रहा था इसी तरह देश की

शेष पृष्ठ 9 पर ☞

www.thearyasamaj.org

त्याग से मुक्ति की ओर

● रमेश चन्द्र पाहुजा

यदि हम अपने चारों ओर दृष्टि दौड़ाते हैं तो देखते हैं कि ईश्वर की इस विशाल सृष्टि में सब ओर यज्ञ ही यज्ञ चल रहा है, वह भी यज्ञ की भावना से। यज्ञ का बहुत ही व्यापक अर्थ है। प्रत्येक कार्य जो त्याग की भावना से, अपने पराये का भेद मिटाकर, विश्व स्तर पर लोक–कल्याण के लिए, परोपकार के लिए किया जाता है, यज्ञ कहलाता है। प्रत्येक कार्य जो ईश्वर से जोड़ता है, यज्ञ कहलाता है। प्रजापति परमात्मा ने सृष्टि की रचना यज्ञ के द्वारा ही की। सर्वप्रथम उसने प्रकृति को जो सत्, रज और तम् की साम्यावस्था है, गति प्रदान कर सृष्टि को बनाया। इसके उपरान्त त्याग–भाव से वह सृष्टि हम सब जीवों को सौंप दी? महर्षि पतञ्जलि योगदर्शन के माध्यम से उद्बोधित करते हैं: **'भोगापवर्गार्थम् दृश्यम्'** अर्थात् यह कार्य–रूप सृष्टि हमारे उपभोग और मोक्ष प्राप्त करने के लिए साधन के रूप में प्रदान की। उसमें ईश्वर का अपना कोई स्वार्थ नहीं है।

हम सभी भलीभांति जानते हैं कि 'यज्ञ' शब्द 'यज्' धातु से बना है जिसका अर्थ है देवपूजा, संगतिकरण और दान। अपने मुख्य विषय की परिधि में रहते हुए, संक्षेप में देव–पूजा का अर्थ है चेतन और जड़ देवों की पूजा। चेतन देवों यानी माता–पिता, गुरुजन आदि के बताये हुए श्रेय मार्ग पर चलना, उनकी तन–मन–धन से सेवा–शुश्रूषा करना और उनके मान–सम्मान और दिन–प्रतिदिन की आवश्यकताओं का ध्यान रखना। यह तभी सम्भव है यदि हममें त्याग की भावना हो। जड़ देवों यानी पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश की पूजा का माध्यम है अग्निहोत्र, क्योंकि अग्नि ही देवताओं का मुख है। हम हवन कुण्ड की प्रचण्ड अग्नि में घृत और औषधि–युक्त सामग्री की आहुति डालते हैं। यह तभी सम्भव है यदि हम हवन–कुण्ड में द्रव्यों का त्याग करें। यही त्याग की भावना समस्त सृष्टि में झलक रही है।

जब हम अग्निहोत्र करते हैं तो इन तीन मन्त्रों का भी उच्चारण करते हैं:

1. ओ३म् भूरग्नये स्वाहा। इदम् अग्नये इदम् न मम।। 2. ओ३म् भुवर्वायवे स्वाहा। इदम् वायवे इदं न मम।। और 3. ओ३म् स्वरादित्याय स्वाहा। इदम् आदित्याय इदं न मम।।

अर्थात् ये द्रव्यों की आहुति अग्नि के लिए है मेरे लिए नहीं। अब अग्नि देव स्वार्थी नहीं हैं जो अर्पित द्रव्यों को अपने पास ही रख लें। वह उसे कई गुणा करके, सूक्ष्म रूप में वायु देव को दे देते हैं। अब भला वायु देव उसे अपने पास क्योंकर रखेंगे? त्याग की भावना से सूर्य देव को देते हैं। सूर्य देव भी उस आहुति में कई प्रकार का योगदान देते हैं। सृष्टि में आदान–प्रदान–त्याग का यह क्रम आगे इस प्रकार चलता है:

4. ओ३म् पर्जन्याय स्वाहा। इदं पर्जन्याय इदं न मम।। 5. ओ३म् भूमये स्वाहा। इदं भूमये इदं न मम।। 6. ओ३म् प्राणीभ्यः स्वाहा। इदं प्राणीभ्यः इदं न मम।।

इस प्रकार से हमने देखा कि कैसे हमारे द्वारा अल्प मात्रा में दी गई आहुति, प्रभु द्वारा निर्मित सृष्टि–क्रम के अन्तर्गत, कई गुना होकर त्याग–भावना से भरपूर, अन्त में धरती माँ द्वारा सारे प्राणी जगत् को प्राप्त हो जाती है। यह त्याग की भावना, **इदम् न मम** की भावना की यज्ञ के **प्राण** हैं। यह महत्वपूर्ण बात महर्षि उद्दालक ने राजा जनक को बताई थी। उन्हीं के अनुसार संक्षेप में यज्ञ की **आत्मा है स्वाहा** और यज्ञ का सार है : सुरभि, सुगन्धि एवं यश की प्राप्ति।

त्याग का एक और महत्वपूर्ण पहलू है **ऐषणाओं का त्याग** पुत्रैषणा, वित्तैषणा और **लोकैषणा** का त्याग। इन सभी ऐषणाओं से हम भली–भांति परिचित हैं। एक साधारण पारिवारिक आत्मा के लिए, अपने शरीर रूपी रथ को चलाने के लिए और आज के भौतिक संसार में कुछ सीमा तक सफलता प्राप्त करने के लिए ऐषणाओं को होना स्वाभाविक है। परन्तु हमें सावधान रहना होगा कि हमारी इच्छायें केवल मूल आवश्यकताओं जैसे रोटी, कपड़ा, मकान और परिवार का भलीभांति पालन–पोषण करने तक ही सीमित रहे, ऐसा न हो कि ये वासनाओं का रूप धारण कर लें। जब एक गृहस्थी अपनी ऐषणाओं की पूर्ति कुछ अंश तक कर चुका होता तो उसे इस संसार की निःसारता, परस्पर सम्बन्धों का वास्तविक ज्ञान भी होने लगता है। जीवन के अनुभव, कटु सत्य उसे साधना के पथ पर अग्रसर होने में सहायक सिद्ध होते हैं। उसका विवेक जागृत हो उठता है और वह वैराग्य, अभ्यास की ओर बढ़ निकलता है। एक उच्च संस्कारिक आत्मा के लिए विवेक, वैराग्य और अभ्यास को प्राप्त करने हेतु, इस मार्ग से गुजरना आवश्यक नहीं है। अतः हमें धीरे–2 अनावश्यक ऐषणाओं का त्याग करते जाना चाहिए।

इसके उपरान्त त्याग का एक और महत्वपूर्ण पहलू है और वह है: **अंहकार का त्याग......** सर्वप्रथम हमें जानना होगा कि हमें अंहकार क्यों हो जाता है? जब कोई मनुष्य यह अनुभव करने लगता है कि वह किसी गुण–विशेष अथवा वस्तु–विशेष की उपलब्धि में दूसरों से आगे है, उस जैसा कोई और नहीं है तो इन्हीं विचारों के कारण, वह व्यक्ति अहंकार का शिकार हो जाता है। फलस्वरूप अपना संतुलन खो बैठता है। छोटों के प्रति घृणा और बड़ों के प्रति अवहेलना का व्यवहार करने लगता है। प्रायः हमें अभिमान होता है अपनी विद्या का, योग्यता का, धन सम्पत्ति का, अपनी और अपने स्वजनों की सत्ता का, अपने शारीरिक बल और सौन्दर्य का और इतना ही नहीं अपनी उपासना का भी। किसी भी नाव को डुबोने के लिए उसमें एक ही छिद्र बहुत है। इसी प्रकार से जीवन रूपी नाव को डुबोने के लिए अंहकार रूपी छिद्र ही बहुत है। हमें स्मरण रखना चाहिए कि Every pride hath a fall ! अहंकार अपने आप में ही एक बहुत बड़ा विषय है। परन्तु हमें भली–भांति समझ लेना चाहिए कि अहंकार है वहां निराकार नहीं हो सकता। जैसे ही मैं, मैं, मैं की समाप्ति होगी, वैसे ही तू ही तू, तू ही तू का शुभारम्भ हो जाता है।

अब हम बढ़ते हैं एक बहुत ही महत्वपूर्ण त्याग की ओर, वह है **मानसिक त्याग।** हम भली–भांति जानते हैं कि हमारे जीवन का अन्तिम लक्ष्य है, परमानन्द की प्राप्ति, मुक्ति की प्राप्ति। मुक्ति का स्वरूप स्पष्ट करते हुए हुए वेदमाता कहती है:

यत्र अनुकामं चरणम्। (ऋग्वेद)

अर्थात् जिस अवस्था में आत्मा अपनी इच्छानुसार, स्वतन्त्रापूर्वक विचरण कर सके, वही मुक्ति है। इसके विपरीत दुःख का क्या स्वरूप है? महर्षि मनु जी का सन्देश है: **सर्व परवशं दुःखम्।** (मनु.) अर्थात् सभी प्रकार की पराधीनता, बन्धन दुःख है। अब हम अपना ही परीक्षण–निरीक्षण करते हैं। क्या हमारी आत्मा स्वतन्त्र है या पराधीन? कहीं आत्मा कर्मपाश के बन्धन में बन्धा हुआ, जन्म–मरण के चक्रव्यूह में तो नहीं फंस गया? क्या हमारी आत्मा रथी है या मन ही रथी बन बैठा है? हम देखते हैं कि हम सब प्रायः मन के वश में ही नाच रहे होते हैं और यह बन्धन का कारण बन जाता है।

इस सन्दर्भ में एक बोध–कथा है कि– एक बार राजर्षि जनक महर्षि अष्टावक्र जी से धर्म–चर्चा कर रहे थे। एकाएक महाराज जनक ने ऋषि के सम्मुख ईश्वर–दर्शन की इच्छा प्रकट की। महर्षि अष्टावक्र जी ने कहा कि प्रभु–प्राप्ति के लिये आपको अपना सर्वस्व ही मुझे सौंपना होगा। विदेही जनक ने शीघ्र ही यह प्रस्ताव मान लिया और अपना सारा राजपाट, धन–दौलत आदि ऋषि को अर्पण कर दिये। महर्षि मुस्कराये और बोले क्या तुमने अपना सर्वस्व त्याग दिया है, क्या सब कुछ मुझे दे दिया है? राजा जनक सोच में पड़ गये और बोले मेरे मन के अतिरिक्त मेरे पास कुछ भी नहीं है। ऋषि ने मुस्करा कर कहा कि अपना मन भी मुझे दे दो तो झट से मैं तुम्हें प्रभु–दर्शन करा दूँगा। अरे कैसा अमूल्य प्रस्ताव है यह! कठोपनिषद् के यमाचार्य जी का भी तो यही सन्देश है : **अनित्यैः द्रव्यै प्राप्तवानस्मि नित्यम्...** (कठो.) अर्थात् अनित्य द्रव्यों के द्वारा मैंने नित्य को प्राप्त कर लिया। कितना उत्तम व्यापार है? अनित्य, विनाशी और क्षण भंगुर मन को त्याग कर, नित्य, अविनाशी और शाश्वत प्रभु को पा लेना। इन विनाशी पदार्थों को तो वैसे भी समाप्त हो जाना था। यदि मन का त्याग करने से, सम्पूर्ण करने से प्यारे प्रभु के दर्शन हो जायें, तो फिर और चाहिये ही क्या? परन्तु त्याग उसी वस्तु का किया जाता है जो अपनी है। क्या वास्तव में मन पर हमारा अधिकार है? इसी प्रसंग में एक बोध–कथा इस प्रकार से है:–

एक साधक सन्त अपने प्रिय सखा से मिलने के लिए अपनी कुटिया से निकले। अभी थोड़ी दूर गये ही होंगे कि एक व्यक्ति जिसने कंधे पर भारी–भरकम बोझ उठा रखा था, अचानक उनसे आ टकराया। सन्त–महात्मा के कन्धे पर बहुत चोट लगी। अभी वह सम्भले ही थे कि वह व्यक्ति वापिस मुड़ा और सन्त–महात्मा को बुरा भला कहने लगा। "क्या अन्धे हो गये थे, क्या देख कर नहीं चल सकते आदि–आदि?" वह साधक चुपचाप आगे बढ़ते गये परन्तु मन में एक चिन्तन आरम्भ हो गया। "कैसा मूर्ख प्राणी है, एक तो गलती की और फिर मुझे ही बुरा–भला कह रहा है। यह तो वही बात हुई जैसे **''उल्टा चोर कोतवाल को डांटे।''** इसी उधेड़बुन में कुछ ही आगे निकले थे कि एक नन्हा बालक जो साइकिल चलाना सीख रहा था, उनसे आ टकराया। परन्तु वह बालक शीघ्र ही महात्मा जी के पांव पड़ अपनी गलती के लिए क्षमा मांगने लगा। महात्मा जी ने प्रसन्न होकर, उसे उठाया और क्षमा करने लगे। इन्हीं दो घटनाओं का स्मरण करते–करते वह अपने मित्र की कुटिया में पहुंच गये। उनके मित्र ने मन को भांप कर उनकी कुशलता के विषय में पूछा। महात्मा कह उठे, "आज मेरी 25 वर्ष की साधना मिट्टी में मिल गई और सारा वृतान्त कह सुनाया। एक व्यक्ति के कटु वचन कहने से मेरा मन दुःखी हो गया और एक नन्हें बालक के मीठे वचनों से प्रसन्न हो गया। क्या

शेष पृष्ठ 11 पर

www.thearyasamaj.org

यदि लघु आणविक सूटकेस बम से भी भारत को निशाना बनाया–

तो पाक भारत के बृहद प्रतिशोध को आमंत्रण देगा–एन.एस.ए.

● हरिकृष्ण निगम

प्रतिरक्षा के नाम पर नाभिकीय आयुधों का जखीरा एकत्र करने के लिए आज जिस तरह चीन और पाकिस्तान में होड़ लगी है, वह भारत के लिए एक गम्भीर चिन्ता का विषय होना चाहिए। दोनों शत्रु पड़ोसियों की भारत के विरुद्ध साझी दुशमनी के कारण इस खेल में साफ़ है भारत का पलड़ा नीचा है।

हाल की स्टाकहोम पीस रिसर्च इन्टीट्यूट (एस.आई.पी.आर.एस) की एक रिपोर्ट के अनुसार चीन के पास आज 250 अणु–शीर्ष युक्त दूरमारक प्रक्षेपास्त्र हैं जो सन 2012 में 240 की संख्या में थे। इसी तरह पाकिस्तान ने अपने अणु–शीर्षयुक्त प्रक्षेपास्त्रों में 10 की बढ़ोतरी कर उनकी संख्या लगभग 120 पहुंचा दी है। भारत का आकार देखते हुए जिसके पास ऐसे प्रक्षेपास्त्र मात्र 110 के आस–पास हैं उसकी स्थिति गम्भीर कही जा सकती है। फिर पाकिस्तान के अणु–आयुधों की नियंत्रण, निर्देश व संचालन प्रणाली इतनी राजनीति–प्रेरित है कि वे जब–तब खुलकर भारत के महानगरों व सामरिक रणनीतिक ठिकानों को ध्वस्त करने के धमकी भी देते रहते हैं। सूटकेसों द्वारा ले जाने की क्षमता वाले **रेडियोलॉजिकल** लघु बमों के उपयोग की नई आतंकवादी धमकियों ने भारत को नए जोखिमों का सामना करने के लिए बाध्य कर दिया है।

हमारा देश पाकिस्तान और चीन के संयुक्त निशानों पर है और जहां तक चीन का प्रश्न है वह एक साथ जापान व उत्तरी–दक्षिणी कोरिया से भी भावी संघर्ष के लिए सन्नद्ध है। अरसे से अपने सन्देह के घेरे में रखे जाने वाले देशों पर अब अन्तर्राष्ट्रीय अप्रसार एजेन्सियों ने भी भरोसा बन्द कर दिया है। अन्तर्राष्ट्रीय अणु–अप्रसार एजेन्सियाँ अथवा राष्ट्रसंघ भी अब पुरानी दो विश्व–शक्तियों के अणु–आयुधों को घटाने के आंकड़ों के आकलन व विश्लेषण में ही व्यस्त रहती हैं। पर अत्याधुनिक आणविक प्रक्षेपास्त्रों वाले विकसित देश आज ईरान, दोनों कोरिया या इजराइल का आक्रामक रणनीतियों को ही वैश्विक अशांति की जड़ मान रहे हैं। वे रासायनिक और जैविक हथियारों के बढ़ते खतरों पर अधिक ध्यान दे रहे हैं।

हम सब इस बात से भी भली भांति अवगत हैं कि भारतीय मानसिकता दूरदर्शिता की नहीं है। हमारा चीन और पाकिस्तान पर विश्वास करना आत्मघाती कदम होगा। क्या ब्रह्मोस सुपरसोनिक क्रूज़ मिसाइल क्या अरुणाचल प्रदेश में तैनात किया जाएगा? ये प्रश्न अप्रासंगिक लगते हैं जब पूर्वी सीमान्त पर बख्तरबन्द सेना या तोपों व टैंकों के संचालन के लिए सड़कों, रेल परिवहन अथवा संचार प्रणाली की ही हमने पूरी व्यवस्था नहीं की है!

जहाँ तक पाकिस्तान का प्रश्न है नौ सेना के पूर्वी कमाण्ड विशाखापट्टन के सेवानिवृत्त फ्लैग आफिसर कमाण्ड–इन–चीफ अरुणकुमार सिंह हाल में घोषित कर चुके हैं कि आज "पाकिस्तान विश्व का सर्वाधिक गति से अणु–आयुधों का बड़ा जखीरा बनाने वाला देश है।" उसके अणु–शीर्षयुक्त नाभिकीय प्रक्षेपास्त्र समस्त भारत के अंदर के किसी भी हिस्से को निशाना बना सकते है। चीन के पास भी ऐसी सामर्थ्य है। पर भारत के पास आज भी ऐसी बहुस्तरीय सुरक्षा प्रणाली **मल्टीलेयर्ड बैलिस्टिक मिसाइल डिफेन्स सिस्टम** नहीं है।

यदि पाकिस्तान भारत पर आणविक हमले की पहल करता है, तब हमारे पास क्या विकल्प होगा? इस सम्भावित भयावह स्थिति पर कई सुरक्षा विशेषज्ञ व रणनीतिज्ञ इसके प्रभावों का आकलन व परिदृश्य संयोजन (सिनेरियो प्लैनिंग) कर चुके हैं। पर हाल में **नेशनल सिक्युरिटी एडवाईज़री बोर्ड (एन.एस.ए.)** के संयोजक श्याम सरन ने इन्द्राणी बागची नामक पत्रकार को दिए एक साक्षात्कार में कहा कि पाकिस्तान का आणविक भयादोहन भारत के विरुद्ध सफल नहीं होगा। यदि उसने भूल से भी **टेक्टिकल** प्रथम प्रहार भी किया तो वह बृहद प्रतिशोध को आमंत्रण देगा। सुरक्षा विशेषज्ञों की शब्दावली में **टैक्टिल** प्रहार का तात्पर्य छोटे अणुबम **सूटकेस** में लाए ले जाने वाले बमों से है। भारतीय आणविक नीति की व्याख्या करते हुए श्याम सरन ने कहा कि प्रथम छोटे से भी प्रहार पर हमारे देश की बड़ी प्रतिक्रिया ही होगी जो किसी बड़े अणु आयुध के हमले पर होगी। क्योंकि हम पहले प्रहार न करने की नीति के लिए प्रतिबद्ध हैं इसलिए हमारा आणविक बदला शत्रु को अधिकतम क्षति पहुंचाने का ही होगा। जो भी आणविक अस्त्र भारत के विरुद्ध प्रयुक्त होगा उसे **स्ट्रेटजिक या टैक्टिकल** का नाम देना हमारी दृष्टि से अनर्गल व अप्रासंगिक होगा।

यह भी भारत के लिए एक लज्जाजनक स्थिति है कि अणु आयुधों के लघु–रूप–मिनियेचराइजेशन – को पाकिस्तान स्वीकार कर चुका है और तालिबान के नाम पर उसके आकस्मिक उपयोग के बहाने वह अपने बचाव का आश्वासन भी मांग रहा है। विश्वभर में फैली आतंकवादी गतिविधियों के सूत्रधार के रूप में वह फिर कोई वीभत्स नाटक रच सकता है। यह हमारे लिये एक चेतावनी है पर क्या हम सचेत हैं, यह एक ज्वलन्त प्रश्न है।

ए–1002 पंचशील हाइट्स
महावीर नगर, कांदिवली (प) मुंबई
400067
दूरभाष – 28606451
मोबाईल – 9820215464

☞ पृष्ठ 7 का शेष

देश शक्तिशाली....

बागडोर कमजोर हाथों में चली जाय तो देश कितना ही शक्तिशाली हो वह कमजोरी का प्रतीक बनकर रह जाता है। कमजोर सैनिक और कमजोर नेता शत्रुओं पर आक्रमण नहीं कर सकते। शत्रु को उसी की भाषा में जवाब देना होता है जो सेना और सरकार ही दे सकती है। इसलिए देश की बागडोर मजबूत हाथों में हो तो ही देश सुरक्षित और शक्तिशाली रह सकता है। शत्रु को उसकी भाषा में जवाब देने के लिए मजबूत मानसिकता की जरूरत होती है जो आज कुर्सी में बैठे हुए नेताओं में नहीं है। इच्छा शक्ति का अभाव तो हमारे नेताओं में आजादी के बाद से ही रहा है। सन् 1947 में पाकिस्तान ने कबीलों को कश्मीर पर आक्रमण करने के लिए भेजा था। हमारे पहले प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू की भीरु वृत्ति के कारण हम सम्पूर्ण कश्मीर वापस नहीं ले सके। उस समय के राजा हरिसिंह ने कश्मीर रियासत को बचाने की गुहार भारत सरकार से लगायी थी लेकिन अपने इमेज की खातिर तथा दुनिया क्या सोचेगी इस अप्रस्तुत भय के कारण पं. जवाहरलाल नेहरू ने दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ पाकिस्तान पर आक्रमण नहीं किया और कश्मीर के प्रश्न को यूएनओ में ले जाकर भारत के लिए सिरदर्द बनाकर रख दिया। पं. नेहरू की इस ढुलमुल नीति से पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के बीच चिरशत्रुत्व का निर्माण हो गया। युद्ध और अहिंसा के विषय में महात्मा गांधी जी ने कहा था– जो स्वयं का वध होते हुए भी अपने हत्यारे के प्रति क्रोध नहीं करता और ईश्वर से उसे क्षमा करने को कहता हैं वही सचमुच अहिंसक है तथा अन्य एक स्थान पर उन्होंने कहा था कि –– ''मनुष्य अपने भाई के हाथों (शायद पाकिस्तान) जरूरत पड़ने पर मरने को तैयार रहकर आजादी से जीता है। उसे मारकर नहीं।'' यहाँ गांधीजी को अभिप्रेत है कि, व्यक्ति शत्रु के हाथों मरकर भी आजाद हो जाता है यानी जिन्दगी से छुटकारा पा जाता है। क्या यह विचार राष्ट्ररक्षा और विदेशनीति के लिए आत्मघाती नहीं है? इस तरह की अकल्पनीय और अनाकलनीय बातें क्या राष्ट्र अथवा समाज को मजबूती दे सकती हैं? और यही शत्रुभय आज के नेताओं के खून में रच बस गया है। ऐसे वक्तव्यों से वह व्यक्ति स्वयं तो महान बन जाता है लेकिन राष्ट्र को कमजोर बना देता है। अनेक नेताओं में यही विचार और संस्कार परम्परा से चले आ रहे हैं। अतः वे बाह्य शत्रुओं और आतंकवादियों के सामने कठोर निर्णय नहीं ले पाते। इसके विपरीत जो राष्ट्रभक्त हैं, इस देश की संस्कृति और परम्परा में विश्वास रखते हैं, उनके मन में इनके प्रति बिल्कुल सहानुभूति नहीं है। इसे ही ''स्वजन उपेक्षा'' और ''शत्रुप्रियता'' कहा जाता है।

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

www.thearyasamaj.org

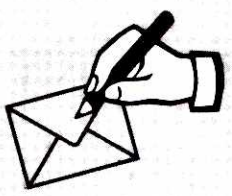

पत्र/कविता

कनाडा से एक पत्र

आर्य प्रतिनिधि सभा अमेरिका तथा वैदिक कल्चरल सैन्टर के आमंत्रण पर 23 जुलाई को यहां पहुंचा। सभा का 23वां वार्षिक महासम्मेलन हुआ, जिसमें लगभग 250 आर्यों ने जो अमेरिका के अनेक राज्यों के आर्य समाजो के सदस्य थे, भाग लिया उनमें 20-25 युवक तथा युवतियां भी थे। अनेक विद्वानों ने विभिन्न विषयों पर खोज पूर्ण वक्तव्य दिये। कुछ विषयों को छोड़कर सम्मेलन अच्छा रहा सभा के प्रधान डॉ. रमेश जी गुप्ता, मंत्री श्री विश्रुत जी आर्य का प्रयास भी प्रशंसनीय अनुकरणीय रहा। मैने भी यथा अवसर ध्यान, यज्ञ कराया, प्रवचन दिये तथा अध्यापन व शंका समाधान किया।

स्वामी दयानन्द जी ने विश्व का वैदिकीकरण करने के लिए जिन उपायों, साधनों, विधि-विधानों का निर्धारण किया है, उन्हीं को मुख्य बनाकर, संगठित होकर, योजना बद्ध रूप में, पूर्ण पुरुषार्थ, त्याग, तपस्या के साथ, निष्काम भावना से कार्य करेंगे तो सफलता अवश्य ही मिलगी। वर्तमान में समाजों की अकर्मण्य, शिथिल, अस्त व्यस्त, न्यूनता हास आदि की दुरावस्था को देखकर, परस्पर दोषारोपण रोना पीटना आदि करके निराश होकर निष्क्रिय उपेक्षित हो जाने से कुछ नहीं होगा। कर्म तो करना ही है, यह ईश्वर की इच्छा है, वेद का आदेश है, ऋषियों का संदेश है महापुरुषों की प्रेरणा है। जिन कारणों से आर्य समाज रूपी आन्दोलन असफल हो रहा है उनको जानकर दूर करने के लिए सुसंगठन बनाना होगा, नये संकल्पों के साथ त्याग और तपस्या के साथ घोर पुरुषार्थ करना पड़ेगा, तभी उग्र प्रतिद्वन्दियों के साथ स्पर्धा में विजय मिलेगी अन्यथा, विनाश, अवश्यम्भावी है।

निराशावाद की इस मानसिकता को सवर्था तिलाञ्जलि दे देनी चाहिए कि "कुछ नहीं होगा, कोई भी सुनता नहीं है, कोई भी आता नहीं है, सभी स्वार्थी बन गये हैं, मैं अकेला क्या कर सकता हूँ, परिश्रम करना बेकार है, घर में शान्ति से बैठे रहो, हमें झगड़ा नहीं करना है, अपमानित नहीं होना है, अब तो ऋषि स्वयं भी आ जायें तो भी सुधार नहीं होगा आदि आदि" बल्कि कुछ लोगों की तो ऐसी प्रवृत्ति बन गयी है कि वे स्वयं तो कुछ नहीं करते हैं, किन्तु जो कुछ आशावादी-उत्साही-कार्यकर्त्ता कुछ करना भी चाहते हैं, उनको हतोत्साहित करते हैं असहयोगी बनते हैं और अनेक प्रकार से बाधायें उत्पन्न करते हैं, ऐसी घातक प्रवृत्ति वाले तो विरोधी शुत्राओं से भी अधिक हानिकारक सिद्ध होते हैं। इन सब को रोकना भी एक महत्त्वपूर्ण प्रयोजन हैं। इसको रोके बिना सारे पुरुषार्थ, तपस्या, त्याग,निष्फल हो जाते हैं।

21वीं शताब्दी में पलने वाली युवा पीढ़ी ने अत्याधुनिक शिक्षा संस्थानों में उच्च स्तर की भौतिक विद्याओं का अध्ययन करके विशिष्ट योग्यताएं उपाधियां प्राप्त की हैं, और औद्योगिक निकायों में सेवा देकर लाखों रुपये मासिक धनोपार्जन कर रहे हैं परिणाम स्वरूप उत्तम स्तर की जीवनोपयोगी साधन सुविधाओं का उपभोग कर रहे हैं। आध्यात्मिक भाषा में कहें तो इन्होंने प्रेय मार्ग का चयन करके अभिष्टी की सिद्धि कर ली है, यह प्रसन्नता की बात है, किन्तु यह स्थिति अपूर्ण है, जब तक परा विद्या को जानकर श्रेयमार्ग पर चल कर, निःश्रेयस् का लक्ष्य बनाये-पीति-पूर्णानन्द की प्राप्ति नहीं होती है तब तक जीवन अधूरा है, असफल ही रहता है।

वेदादि समस्त धार्मिक शास्त्रों में जिन कार्यों को अधर्म, अभद्र, अशिष्ट, अश्लील, अनर्थकारी बताया गया है, अन्ततो गत्वा जिनका परिणाम समाज, राष्ट्र और विश्व के लिए दुःखदायी बताया गया है, उन सब को यह नई पठित पीढ़ी खुले आम निःसंकोच, स्वच्छन्दता से कर रही है, इतना ही नहीं राज्यधिकारी, नेता, श्रीमन्त, बुद्धिमान, प्रतिष्ठित -विद्वान् भी इनका विरोध नहीं कर रहे हैं। बल्कि कहीं पर ऐसा हो रहा कि अनिष्ट कारी कार्यों को करने का विधान बनाया जा रहा है।, अधिकार दिया जा रहा है, उन्हें साधन-सुविधाएं छूट देकर प्रोत्साहित किया जा रहा है। इससे भी अधिक आश्चर्य एवं शोक होता है कि आत्म बल के अभाव के कारण, इन सब को हानिकारक मानते हुये भी अभिभावक, गुरु, आचार्य राग या मोह या स्वार्थ के कारण इन सब का निषेध करने का साहस नहीं कर पा रहे हैं।

मात्र संध्या, यज्ञ, स्वाध्याय, सत्संग आदि व्यक्तिगत कर्त्तव्यों को येन केन प्रकारेण सम्पन्न करके हम यह मान बैठे हैं कि मेरा सामाजिक राष्ट्रीय दायित्व पूरा हो गया है, यह भ्रान्त धारण है, झूठा आत्म सन्तोष है। देव संस्कृति को विनष्ट करने हेतु आसुरी शक्तियां पूर्ण सगठित होकर तन, मन, धन, जीवन समर्पित करके, सम्पूर्ण बल के साथ लगी हुई हैं और हम ऐसा होते हुए देख रहे हैं, पढ़ रहे हैं, सुन रहे हैं। इसके प्रतिकार के लिए कोई विचार, योजना,त्याग बलिदान की भावना नहीं तो फिर कौन आयेगा इसको बचाने के लिए? क्या ईश्वर आयेगा? स्वामी दयानन्द जी आयेगे? नहीं हमें ही ये सब कार्य करने होंगे। पाशविक-आसुरी शक्तियों के क्रूर कुकर्मों को रोकने के लिए हमें ही बलिदान करना होगा। हे प्रभो! आप से हार्दिक प्रार्थना है कि आत्मा में ऐसे दिव्य भावों को भरो कि स्वार्थ की संकुचित विचारधारा को छोड़कर, सर्वात्मना इस महत्वपूर्ण कार्य को करने के लिए सुसज्जित हो जायें

ज्ञानेश्वरार्यः
वैदिक सांस्कृतिक केन्द्र
मारखन (कनाडा)

****

सत्य शाश्वत् है

असुरों की नगरी में वह
सत्य के पक्ष में लड़ने निकला,
भीड़ असुरों की,
अकेला वह।

पर देख लेना अन्ततः
सत्य ही विजयी होगा।
परेशान भले ही हो
सत्य कभी पराजित नहीं होता।

संभावना यह भी है-
वह समरभमि के संघर्ष में
सो जाए अपनी काया
धरती पर रखकर,
पर इसे-
कभी सत्य की हार न मानना।

सत्य की पीठ पर धरती चलती है
सूर्य-चन्द्र सत्य की अंगुली पकड़कर
गमन करते हैं
पंचतत्व सभी-
सत्य को ही नमन करते हैं।

सत्य शाश्वत् है,
सार्वभौमिक है,
सत्य के अंकुर में ही
सृष्टि का सृजन है,
सत्य जन-गण-मन है
ब्रम्हाण्ड का परिभ्रमण है,
नियमन है।

महात्मा चैतन्यमुनि
महादेव, सुन्दर नगर - 174401 (हि.प्र.)

☞ पृष्ठ 8 का शेष

त्याग से मुक्ति...

यह मन मेरा है या इस संसार का है?" साधना के पथ पर चलने के लिए यह अति आवश्यक है कि हमारे मन हमारा पर ही आधिपत्य हो।

अब प्रश्न उठता है कि मन तो बहुत ही चंचल है। एक ही क्षण में रामायण काल में पहुँच जाता है तो दूसरे ही क्षण भविष्य के सपनों में खो जाता है। आत्मा इसे अपने वश में कैसे करे? हम जानते हैं कि आत्मा अपने सारे कार्य किसी न किसी उपकरण के द्वारा ही करती है। मन में शक्तिशाली कौन सा उपकरण है जिसके द्वारा मन को जीत लिया जाये। छान्दोग्य उपनिषद् में एक बोध-कथा आती है। एक बार इन्द्रियों में परस्पर झगड़ा हो गया कि सबसे शक्तिशाली कौन है? हर कोई अपने आपको दूसरे से अधिक महत्वपूण दर्शाने का प्रयत्न करने लगा।

अन्त में सब प्रजापति परमात्मा के दरबार में पहुँच गये और अपनी समस्या उनके सम्मुख रख दी। ईश्वर ने उन्हें एक उपाय सुझाया कि एक-एक कर के तुम इस शरीर से बाहर निकल जाओ। जिसके शरीर में से निकल जाने पर शरीर कार्य करना बन्द कर दे वही शक्तिशाली है। सर्वप्रथम अपने आपको सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए, आँख शरीर से बाहर निकल गई। परन्तु शरीर बिना आँख के भी चलता रहा। इसी प्रकार मन सहित सब इन्द्रियाँ बारी-2 शरीर से बाहर निकलने लगीं परन्तु शरीर जैसे चलता ही रहा। अब बारी आई "प्राण" की। जैसे ही प्राण शरीर से बाहर निकलने लगा, सब इन्द्रियाँ शिथिल पड़ने लग गई, मृत तुल्य हो गईं। अन्त में सबने अपनी हार मान ली और प्राण को सबसे महत्वपूर्ण और शक्तिशाली घोषित कर दिया गया। कहने का भाव है कि प्राण मन से भी अधिक शक्तिशाली है और **आत्मा प्राण के द्वारा मन को वश में कर सकती है।** इसलिए योगी-जन हमें निर्देश देते हैं: **मरुद्भिः इन्द्रसख्यं ते अस्तु।** हे जीव, हे इन्द्र! तेरी मित्रता प्राणों के साथ होनी चाहिए क्योंकि प्राण सब इन्द्रियों का स्वामी है। अथर्ववेद द्वारा भी यही संदेश है: **प्राणाय नमो यस्य सर्वमिदं वशे।** अर्थात् प्राण को नमस्कार जिसके वश में कुछ है। अब प्राणों के साथ मैत्री कैसे की जाये? यह सम्भव है केवल और केवल प्राणायाम के द्वारा ही। इस प्राण-शक्ति को वश में करने से मन वश में आ जाता है, आयु दीर्घ होती है और मृत्यु के समय कोई क्लेश नहीं होता। मृत्यु को समीप अनुभव करता हुआ, यह आत्मा मन के द्वारा प्रभु चरणों में समर्पित हो, प्राणों का अनायास बाहर फेंक देता है यानी प्राणों को त्याग कर मुक्ति को प्राप्त कर लेता है। स्वामी दयानन्द जी ने अपनी अन्तिम घड़ी में, इसी प्रकार अपने प्राणों को त्याग, मृत्यु को जीत लिया था।

इस प्रकार हमने जाना कि कैसे उस प्रभु की विशाल सृष्टि में सब ओर यज्ञ ही यज्ञ चल रहा है जिसमें मूल भावना है त्याग की। यदि हम परमानन्द की प्राप्ति करना चाहते हैं तो आइये उस ईश्वर की सृष्टि से शिक्षा ग्रहण करें। हम त्याग करें पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकैषणा का। त्याग करें अहम् का, अहंकार का और फिर धीरे-2 मन को प्राणों के द्वारा वश में करते हुए, अर्पित कर दें प्रभु के चरणों में। यह मन का त्याग, समर्पण ही हमें मोक्ष की प्राप्ति करायेगा।

आर्य समाज,
मॉडल टाउन,
यमुनानगर

☞ पृष्ठ 9 का शेष

देश शक्तिशाली....

जब सरबजीत सिंह पाकिस्तान की जेल में यातनाएं भुगत रहा था तब सरकार उसकी ओर गंभीरता से नहीं देख रही थी। सरबजीत का परिवार भारत सरकार से आक्रोश कर कह रहा था कि सरबजीत निर्दोष है, उसे किसी तरह बचा लो। सत्ताधारियों ने परिवार की बात को गंभीरता से नहीं लिया और जब उसे जेल में बड़ी नृशंसता से मारा गया तब उसे शहीद का दर्जा देने और और झूठी सहानुभूति दिखाने की होड़ लगी रही। यह बात सरकार की समझ में आनी चाहिए थी कि कसाब और अफजल गुरु को फांसी दिये जाने के बाद भारतीय कैदियों के साथ धोखा हो सकता है। लेकिन इस तरह की दूरदृष्टि हो तभी ना। यह भारतीय नागरिकों के प्रति उदासीनता और गैरों के प्रति तत्परता का भाव नहीं तो क्या है? इस फांसी काण्ड के बाद सम्बंधित मन्त्रालयों द्वारा पाकिस्तान के शासकों को चेतावनी देना जरूरी था कि हमारे नारगरिकों के साथ कोई ज्यादती न हो और कुछ कम ज्यादा होगा तो इसकी जिम्मेदारी पाकिस्तान की होगी। पर ऐसा कुछ नहीं किया गया और जो होना था वह सरबजीत के साथ हुआ। यह बेफिक्री मिजाज् किसी शक्तिशाली देश का लक्षण नहीं हो सकता। अगर यही घटना किसी चीनी नागरिक के साथ हमारे यहाँ हो जाती तो चीन अपने नागरिक के लिए क्या न करता। इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। इटली के दो हत्यारों का यह सरकार वापिस नहीं ला सकी, उनको भारत वापिस लाने में न्यायालय की भूमिका अहम रही है। यहाँ पर भी नेताओं की निर्णय क्षमता और निडरता नहीं दिखाई दी।

हमारे देश में नेता देश बचाने से अहम अपनी सत्ता बचाने को महत्व देते हैं इसलिए देश की सुरक्षा और नागरिकों के हितों को दोयम दर्जा दिया जा रहा है। पहले से ही खून में आ रही पराकाष्ठा की अहिंसा और उस पर दूर दृष्टि का अभाव राष्ट्र को दुर्बल बनाने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। सत्ता के लिए पैसा और पैसे के लिए भ्रष्टाचार यह दुष्चक्र हमारे नेताओं के जीवन में घुल मिल गया है। अनैतिक आचरण से आत्मबल नष्ट हो जाता है। आत्मबल के लिए नेताओं में निस्वार्थ भावना होनी चाहिए। इसी निस्वार्थ भावना से कठोर निर्णय लेने कि शक्ति आती है। यह आत्मबल किसी बाजार में नहीं मिलता। महात्मा गांधी के नैतिक आचरण को इन नेताओं ने नहीं लिया, लिया सिर्फ अहिंसा की अतिवादिता को।। मैं पहले भी कह चुका हूं कि गांधीजी की अहिंसक वृत्ति वैयक्तिक और आध्यात्मिक जीवन के निर्माण के लिए तो उपयोगी है लेकिन राष्ट्र के लिए घातक है। जो व्यक्ति राष्ट्रहित की बजाय स्वार्थ हित साधता है वह स्वयं तो नष्ट होता है और देश को भी नष्ट कर देता है।

आज भ्रष्टाचार देश को दीमक की तरह खाये जा रहा है। देश का आर्थिक शोषण इसी भ्रष्टतंत्र के कारण हो रहा है। जनता के खून पसीने की गाढ़ी कमाई को नेता घूस ले देकर सफाचट कर रहे हैं। 2-G घोटाला, कोयला घोटाला, कलमाडी द्वारा किया गया खेल घोटाला और अभी हाल में पवन कुमार बंसल द्वारा किया गया सबसे बड़ा रेल घोटाला ये देश को रसातल तक पहुंचाने में और आर्थिक दृष्टि से नष्ट भ्रष्ट करने में सहायक सिद्ध हुए हैं। भ्रष्टाचार और उसके द्वारा सत्ता हथियाना नेताओं के हथकण्डे बन चुके हैं। भ्रष्टाचार से नैतिकता और आत्मिक बल नष्ट हो जाता है और ऐसे नेता जब सत्ता के सिंहासन पर बैठते हैं तो देश कमजोर हो जाता है। वे कठोर निर्णय लेने में अकार्यक्षम होते हैं। आजादी की लड़ाई वाले नेताओं में जो कार्यक्षमता दिखाई देती थी वह आज के नेताओं में इसलिए नहीं है कि उनका नैतिक बल गिर चुका है। वे सत्ता सुख के इतने आदी हो चुके हैं कि उन्हें संघर्ष करना तो दूर राष्ट्रहित में निर्णय लेने की क्षमता तक नहीं रही।

15 अगस्त और 26 जनवरी को भारतवर्ष का तिरंगा लहराया जाता है। लाल किले पर प्रधानमंत्री देश के आगामी संकल्प को दोहराते हैं। वहाँ पर भी सामयिक समस्याओं की ही चर्चा की जाती है। होना तो यह चाहिए कि आने वाले समय में हम देशहित में क्या करने जा रहे हैं, दृढ़ संकल्प को दोहराया जाना चाहिए। हमारे पड़ोसियों के सम्बंधों पर नीति निर्धारण होना चाहिए। लेकिन वैसा कुछ सुनने को नहीं मिलता। 26 जनवरी को विदेशी मेहमान के सामने शस्त्रास्त्रों का प्रदर्शन करने की एक परम्परा बन चुकी है। हम अपने हथियारों का प्रदर्शन करने में स्वयं को धन्य मानते हैं लेकिन सीमापार पर उनके प्रयोग से डरते हैं। मानो यह कह रहे हों" ऐ! पड़ौसी देश के रहनुमाओं देख लो हमारे पास कैसे-कैसे खतरनाक हथियार हैं। देख लो।" हम दिखावा करते हैं कभी सीमा पर जाकर मजबूती से क्रियात्मक अभ्यास नहीं करते। ये नेता ये सोचते हैं कि हमारे पास इतने घातक हथियार है तो फिर कैसे शत्रु हम पर आक्रमण कर सकता है। लेकिन शत्रु बहुत चालाक है, वह आपके प्रदर्शन से नहीं डरता क्योंकि हथियार प्रयोग करने की हिम्मत आप में नहीं है वह यह बखूबी जानता है। जैसे कंजूस आदमी जेब में पैसे रखकर भी वह खर्च नहीं करता उसी तरह हथियारों से लैस मुल्क उन अस्त्रशस्त्रों का प्रयोग नहीं कर सकता क्योंकि उनमें वह आत्मिक बल अथवा कठोर निर्णय लेने की क्षमता नहीं है।

आज इज्राइल का ही उदाहरण ले लीजिए एक टापू जैसा देश चारों ओर से अरब राष्ट्रों से घिरा हमारे जैसे आतंकवादियों से जिसको खतरा लगातार रहता है, जहाँ उपजाऊ जमीन का नितान्त अभाव है, जहाँ कृषि विकास के उतने साधन नहीं है, फिर भी अपनी इच्छाशक्ति और कठोर निर्णयों के कारण शत्रु राष्ट्रों के बीच अडिग होकर खड़ा है। यदि उसके एक नागरिक की हत्या होती है तो उसके बदले शत्रुराष्ट्र के दस नागरिकों को मौत के घाट उतारा जाता है। और इसी कठोर नीति के कारण पड़ौस के देश उसके साथ संघर्ष मोल नहीं लेना चाहते। हमारा देश विशाल है फिर भी हम दब्बू बनकर देश की मानसिकता को संकुचित किये जा रहे हैं। (पूर्वार्द्ध)

www.thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 04-05 /09/2013
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39/57

डी.ए.वी. सैक्टर-14, फरीदाबाद में संस्कृत दिवस सोल्लास सम्पन्न

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल सैक्टर -14, फरीदाबाद में संस्कृत दिवस सोल्लास मनाया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि विद्यालय के प्राचार्य श्री सुरेन्द्र सिंह चौधरी व विद्यालय की सुपरवाइजर श्रीमती तनूजा आनन्द थीं।

कक्षा नवमी के बच्चों ने सभी अध्यापकों, अभिभावकों तथा बच्चों को इस शुभ अवसर पर बधाई दी तथा संस्कृत का महत्त्व भारतीय संदर्भ में बताया।

बच्चों ने इस शुभ अवसर पर वेदमन्त्र गायन, समाचार वाचन, संस्कृत के महत्त्व पर विशेष विचार, श्लोक गायन, '**भाषासु दिव्या मधुरा गीर्वाण भारती**' नामक एकांकी नाटक तथा शास्त्रीय नृत्य आदि कार्यक्रम संस्कृत भाषा में प्रस्तुत किए जिसकी शोभा देखने योग्य थी। सभी ने इस कार्यक्रम की भूरि भूरि प्रशंसा की।

प्राचार्य श्री सुरेन्द्र सिंह चौधरी जी ने संस्कृत का महत्त्व बताते हुए कहा कि संस्कृत भाषा सभी भाषाओं का मूल है। संस्कृत संस्कृति से जुड़ी होने के कारण संस्कारों का निमार्ण करती है। कम्प्यूटर में प्रयोग किये जाने योग्य है। हर किसी को संस्कृत भाषा अवश्य पढ़नी चाहिए।

कार्यक्रम के अन्त में सभी ने संस्कृत दिवस की एक दूसरे को बधाइयाँ दीं।

एस.एफ.डी.ए.वी. मुज़फ्फरनगर ने प्रदूषित जल का सर्वेक्षण

एस.एफ.डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, मुज़फ्फरनगर के कक्षा 11 के विद्यार्थियों के द्वारा प्रदूषित जल का सर्वेक्षण किया गया जिसमें विद्यार्थियों द्वारा प्रदूषित जल के विभिन्न कारणों व इसके द्वारा होने वाली विभिन्न प्रकार की समस्याओं पर परीक्षण किया गया। जिसमें पाया गया कि यदि इसी प्रकार जल प्रदूषण की समस्या समाज द्वारा विस्तारित होती रही तो अनेक बीमारियाँ जैसे-मलेरिया, हैजा आदि हमारे जन जीवन को विराट रूप में प्रभावित करेंगी। इन बीमारियों की जड़ फैक्ट्रियों से निकालने वाला प्रदूषित जल, खेतों से आने वाला रसायन युक्त का जल है। इस विषैले जल के कारण धीरे-धीरे भूमिगत जल प्रदूषित हो जायेगा।

अतः समाज में इस समस्या के निदान हेतु आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए जिसके लिए समाज के प्रत्येक वर्ग में जागरुकता की आवश्यकता है जिसमें कि हमारे विद्यार्थियों द्वारा एक सूक्ष्म प्रयास किया गया है। विद्यार्थियों द्वारा काली नदी के सर्वेक्षण पद एक प्रस्तुतीकरण भी तैयार किया गया, जिसमें उन्होंने जल प्रदूषण के कारण और निवारण का दर्शाया है।

डी.ए.वी. चनारथल का शानदार प्रदर्शन

माता गुजरी सीनियर सैकण्डरी स्कूल फतेहगढ़ साहिब में पंजाब स्कूल शिक्षा बोर्ड द्वारा प्रतिवर्ष की तरह इस वर्ष भी विभिन्न प्रतियोगितायें आयोजित की गईं जिनमें विभिन्न स्कूलों के छात्रों ने अपनी-अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया। बाबा बीरम दास डी.ए.वी.पब्लिक स्कूल चनार्थल खुर्द के छात्रों ने सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करते हुए शब्द गायन के वरिष्ठ वर्ग में कु. रमनदीप कौर, कु. जगमनप्रीत कौर, कृ. रमनदीप कौर, जय सिंह और रोबिन शर्मा ने भाग लेकर प्रथम स्थान प्राप्त किया। इसी तरह गीत गायन के कनिष्ठ वर्ग में कु. गुरप्रीत कौर, दमनप्रीत सिंह, हरमनवीर सिंह, लवकेश सिंह तथा मनिदरपाल सिंह ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। विजयी छात्रों को आयोजक स्कूल के प्रधानाचार्य द्वारा स्वर्ण और रजत पदकों से सम्मानित किया गया।

डी.ए.वी. स्कूल के प्रधानाचार्य श्री पंकज कौशिक, निदेशक श्री विजय कुमार और प्रबंधक श्री एस मारिया जी ने सभी प्रतियोगियों, संगीत अध्यापिका को हार्दिक बधाई दी और आगे भी इसी तरह से अच्छे प्रदर्शन के लिए शुभकामनाऐं दी तथा प्रतियोगियों को विशेष रूप से सम्मानित किया गया।

तिहाड़ गुरुकुल द्वारा आर्य समाज, जनकपुरी में भव्य कार्यक्रम

आर्य समाज, बी ब्लाक, जनकपुरी, नई दिल्ली में साप्ताहिक सत्संग के अवसर पर गुरुकुल तिहाड़ के ब्रह्मचारियों द्वारा यज्ञ, भजन, प्रवचन एवं योगासन का भव्य कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। ब्र. शशांक ने दान के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि दान का पालन करने से जीवन का कल्याण होता है, जो दान नही करता उसे जीने का अधिकार नहीं है। ब्र. सागर आर्य ने परोपकार की चर्चा करते हुए कहा कि सूर्य, चन्द्रमा पृथिवी, जल ओषधि वनस्पति इत्यादि समस्त पदार्थ परोपकार कर रहे हैं। मनुष्य को श्री परोपकारमय होना चाहिए। समस्त ब्रह्मचारियों ने आसनों के द्वारा स्तूप बनाकर कार्यक्रम को विराम दिया। तिहाड़ गुरुकुल के सहयोगी श्री चेतन आर्य जी ने भी ईश भक्ति का सुमधुर भजन प्रस्तुत किया। गुरुकुल के सञ्चालक श्री नीरज आर्य जी ने गुरुकुल की दिनचर्या एवं व्यवस्थाओं पर प्रकाश डालते सहयोग की अपील की।

सत्संग हाल में विद्यमान सभी श्रोतागणों ने ब्रह्मचारियों एवं सञ्चालक की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

मुद्रक व प्रकाशक - श्री प्रबोध महाजन, सभा मंत्री द्वारा मदन गोयल के प्रबंध में अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित। स्वामित्व - आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक - श्री पूनम सूरी